श्रीः ।

शिक्षानिक्षेप.

पूर्वभाग ।



नाभानरेश पञ्चश्लोकी, ग्रन्थप्रस्तावके चार श्लोक सहित ।

श्रीमद्वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्य, श्रीमत्कमलनाभनरेश
श्रीहीरासिंह नरेशविद्वत्सिंहसभासदाचार्य
चक्रवर्ति वात्स्य श्रीसम्पत्कुमार नृसिंहा-
चार्य स्वामि प्रणीतः ।



सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास के
बम्बई
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना में
छापके प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९५५, शके १८२०.

कीमत ॥)

भूमिका।

इस संसारमें अधिक संख्या के जन ऐसे हैं कि "प्रापंचिक व पारमार्थिक" इन दोनो विषयोंमें "ऐतिहासिक व आगमिक इन दोनों ज्ञानोंसे रहित" केवल अंधपरंपरासे सुना सुनी करके जगे २ उपदेश किया करतेहैं, उससे किसीप्रकार का लाभ ठीक २ होनहीं सकताहै इसीलिये श्रीमन्नारायण ब्रह्मदेव महादेव मनु हारीत पराशर व्यासादि भगवद्देव महर्षियोंने आगम. धर्म. नीति. पुराण. इतिहास. रचदियेहैं, जिनसे वास्तविक ज्ञान उत्पन्न होताहै, सो कुछ कालसे कितने लोकोंमे इन ग्रंथोंके देखने सुनने में आलस्य अश्रद्धा उत्पन्नहोने देखके अनभिज्ञ जनके कपोल कल्पित नवीन असांप्रदायिक ग्रंथोंको बांचनेसे होनेवाले प्रपंच परमार्थोंके विरोध दूरहोके तात्विकानुसंधान का स्मरण बनारहनेके वास्ते थोडेही समयमें संपूर्ण बांचके कर्तव्य समझने लायक खुलासासे आगम. धर्म्म. नीति. पुराण. इतिहास इनकागूढार्थ दृष्टांतोंके रूपकोंके द्वारा जोडके यहछोटासा भाषा वार्त्तिक उपन्यासग्रंथ लिखागयाहै दोभागोंमे यहसंपूर्ण कियागयाहै, प्रथम भागमें सबको आसानीसे मतलब मालूमहोनेके लिये साधारणरीतिसे महविराके शब्दोंसे "प्रजाधर्म, राजनीति, और ब्रह्मविद्या, लिखनेमे आई हैं, दूसरे भागमें असाधारणरीतिसे कहीं २ शास्त्रप्रसिद्ध शब्दोंसे इन्हीं विषयोंका विवरण शंकासमाधान पूर्वक कुछ विस्तारसे लिखागयाहै, जिससे इनविषयोंमे बहुतसी शंका न उठसकें" प्रथमभागको बांचके समझनेसे दूसरा भागभी साधारणसाही समझमें आवेगा, प्रथमभागके संदेह सब दूसरेभाग से निवृत्तहोतेहैं, इसलिये विद्याबुद्धि विवेकानुरागी सज्जन गण इसग्रंथका अवलोकन व अनुभव करके हमारा परीश्रम सफल-

कैरेंगे, इसीआशासे हम प्रतिदिन वेद. वेदांत. आगम. धर्म्मशास्त्र नीतिशास्त्र. पुराणेतिहास सारार्थ निबंध निर्म्माणैक प्रयोजन होरहेहैं, इससे सर्व जनों को परमलाभहोनेका निस्संदेह संभवहै इसबातको इसग्रंथको बांचनेवाले स्वयं जानसकतेहैं, श्रीरस्तुः श्रीमान्नारायणः शरणम् ॥

श्रीमदाचार्य्य चक्रवर्ति सिंहासनाधीश्वर श्रीमत्प्रणतार्त्तिहारि गुरुवरवंश्य श्रीसानुगिरि वास्तव्य श्रीकविगंडभेरुंडाचार्य्या परनामधेय श्रीमतिरुवेंगडाचार्य्य स्वामितनूभव श्रीरंगाचार्य्य स्वामितनूजनुषा श्रीमत्संपत्कुमार नृसिंहाचार्य्य स्वामिना विलिखितः संक्षेप शिक्षानिक्षेप नामा भागद्वयात्मा भाषावार्त्तिको पन्यासग्रंथोजयतुतराम्. श्रीः ।

प्रकाशकः कश्चित् ॥



श्रीनाभानरेशपञ्चश्लोकी ।



श्रीराजद्युवराजवैरिदमनश्रीसिंहसंसेवितो
हीरासिंहनरेश्वरः सुरुचिरश्रीपद्मनाभेश्वरः ।
धीरोक्ताः श्रुतिसम्मता नयकथाः शृण्वन्विवृण्वंश्चिरं
धीरोहेण विराजते सह महासिंहैः सदस्यन्वहम् ॥ १ ॥

महाराजो राजाधिपतिरधिराट् प्राप्तविभवो
महाराज्ञ्याः पुत्रप्रतिनिधिरथो भारतभुवः ।
अहीनप्राणोऽवन्निह जयतु दीर्घायुरवनिं
स हीरासिंहः श्रीरिपुदमनसिंहेन सहितः ॥ २ ॥

पुरेत्य द्वारावत्यभवदिह नाभेति नगरी
सुधर्मेत्यास्थानी समभवदवाक्सिंहसदसी ।
विचार्यैतीमेधिष्ठितुमुदगनेहस्यभवतां
स्वभूर्हीरासिंहो रिपुदमनसिंहो हृदयभूः ॥ ३ ॥

यशःपीयूषाढ्ये महति सुमनोवंशजलधौ
द्विजाधीशो जैवातृक इह कुमुद्वंधुरुदितः ।
स हीरासिंहक्ष्मारमण इव चंद्रो विलसति
क्षमः को वंशेस्मिन्नतिशयितुमेनं निजगुणैः ॥ ४ ॥

महागुर्वादेशप्रवणहृदयः स्वीकृतनयो
महाभूभृद्विद्याकलितविनयो राजतनयः ।
मिताहाराचारोत्तरशयविहारो विजयतां
स हीरासिंहाब्धेरिपुदमनसिंहः सितकरः ॥ ५ ॥

ग्रंथप्रस्तावना चतुःश्लोकी ।

प्रभोः श्रुत्वा शिष्ट्या पृथुलकरणं प्रेमहरिणा
कृतं नाम्ना ग्रंथं कमपि धिषणावारिधिमहम् ।
इमं शास्त्राधारं सुतनुकरणं सुप्रकरणम्
तदुत्तंभं वेलामिव रचितवान् ग्रंथमपरम् ॥ १ ॥
जगद्बाधायान्ये बहुमतजुषः स्थूलवपुषः
प्रबंधाः सद्बंधा बुधविरचिताः संतु शतशः ।
नयज्ञानायास्मान्निचित उचितो ग्रंथइदयं
स शिक्षानिक्षेपाभिध उभयभागोस्तु मुकुरः ॥ २ ॥
यथा श्रीपुंसिंहाख्रिदिवपतिसिंहो विजयते
तथासौ पुंसिंहः कविकथकसिंहो विजयताम् ।
यथा हीरासिंहो भुवनपतिसिंहो विजयते
तथा श्री[illegible]सिंहो [illegible]सिंहो विजयताम् ॥ ३ ॥

यथा श्रीवैकुंठावतरणयशोऽस्मिंस्त्रिजगति
प्रसिद्धं कर्णात्मेक्षणमुखतटे तिष्ठति सदा ।
तथेदं तिष्ठेत्कौ नयनमुखकर्णात्मसु नृणां
सुशिक्षानिक्षेपप्रकरणनृवाग्वार्त्तिकमपि ॥ ४ ॥

श्रीमत्संपत्कुमारनृसिंहाचार्यस्वामी

विद्वत्सिंहास्थानसभासद्,

रियासत नाभा—मुल्क पंजाब.



श्रीः ।

अथ शिक्षानिक्षेपप्रारम्भः ।

श्रीमते महापुरुषसिंहाय नमः ।

यो सौ धीभक्तिवैराग्यदायको लोकनायकः ।
देवः पातुश्रियाऽमाऽऽद्यो देशिकानांसदेशिकः १
धर्मं तथा राजनीतिं ब्रह्मविद्यां च भाषया ।
संलक्षयन्नृणांकुर्वे शिक्षानिक्षेप वार्त्तिकम् ॥ २ ॥

जो मूलप्रकृति महतत्त्व अहंकार पंच ज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेंद्रिय पंच तन्मात्र पंच महाभूत अंतःकरण स्थूल सूक्ष्म चेतना चेतनोंके अंतर्यामी और सर्वज्ञ सर्व शक्ति सर्वेश्वरहै, उस परमेश्वरको वारंवार हमारा नमस्कारहो ॥ १ ॥

अब श्रीसद्गुरु महाराजके चरण कमल युगलको साष्टांग प्रणाम कर राजराज महाराज शिरोमणि कमलनाभ नगरेश श्रीहीरासिंह नरेशको परिपूर्ण आशीर्वाद कर मुग्धबोधनार्थ पितापुत्र संवाद रूपसे इस शिक्षानिक्षेप वार्त्तिक का लेख प्रारंभ करतेहैं ॥ २ ॥

पितासे पुत्रने प्रश्न किया कि महाराज मेरेको धर्म राजनीति और ब्रह्मविद्या इनको संक्षेप करके वर्णन करिये ॥ ३ ॥

पिता बोला हे पुत्र! सुनो तन मन वाणी करके प्राणिमात्रकी रक्षा करना सबका हित बिचारना सत्‌शास्त्रोंकी आज्ञाके अनुसार वर्त्ताव रखना परोपकार करते रहना इसका नाम धर्महै इसीसे पुण्य होता है प्राणियोंकी हिंसा करना सबका अहित बिचारना वेदशास्त्रोंकी आज्ञाके विरुद्ध आचरण करना पराया अपकार करना इसका नाम अधर्म है इसीसे पाप होताहै प्राणिरक्षा और हिंसा हित अहित उपकार व अपकार ये कैसे होतेहैं इसका भेद सूक्ष्महै सतसंग करके जानने योग्यहै ४

नीति क्या—देशकालोंके अनुकूल लोक वेदोंके अनुसार धर्मयुक्त कार्योंको करना मर्यादामें रहना इसका नाम नीतिहै. देशकालोंको बिना देखे लोक और वेदके विरुद्ध अधर्मसे अपना निर्वाह करना इसका नाम अनीतिहै ॥ ५ ॥

ब्रह्मविद्या क्या—वेद शास्त्रोंको सुनकर परदेवताको जानकर निश्चय करके उसका स्मरण करना इसको ब्रह्मविद्या कहतेहैं जितने कार्य हैं

उसी परदेवताकी कृपा करके सिद्ध होतेहैं इस लिये हरेक उद्यममें उस परब्रह्म परदेवताका आसरा लेना चाहिये ॥ ६ ॥

प्रथम बाल अवस्थामें पढना चाहिये जिससे सब वार्ता जानी जाय बालअवस्थाकी विद्या जन्मभर याद रहती है पढ़नेसे सत् असत्की पहिछान होतीहै पढा हुआ मनुष्य लोकमें प्रतिष्ठा पाताहै विद्यावान का राजसभामें सन्मान होताहै द्रव्यकाभी लाभ होताहै परदेशमें विद्या सहाय होतीहै ॥ ७ ॥

गुरुओंकी सेवा तन मन धनसे बहुत काल करनेसे विद्या प्राप्त होतीहै अथवा विद्या देनेसे विद्याप्राप्त होतीहै और उपायसे विद्या नहीं प्राप्त होसक्तीहै विनापढे मनुष्य पशुके तुल्यहै क्योंकि अपना और पराया हित अहित जान नहींसक्ताहै ८

जो मनुष्य जुवाखोरहैं चोरहैं दुराचारी व्याभिचारी मांसमदिराका आहारी वेश्यानारीहै उसका संग सदैव त्यागना चाहिये क्योंकि उससे बहुत अनर्थ खडे होजाते हैं ॥ ९ ॥

गृहस्थाश्रममें जो रहते हैं उनको धर्म अर्थ काम ये तीनो संग्रह करने योग्य हैं क्योंकि धर्मसे

पाप दूर होताहै लोक सुधरता है अर्थ करके पुण्य होताहै और ऐश्वर्य बढताहै कामकरके विषय वासना पूर्ण होतीहै अपना नाम बना रहताहै परंतु इनका संग्रह देशकाल पात्रोंको देखकर करें ॥ १० ॥

सवेरे धर्मका संग्रहकरे मध्याह्नमें अर्थका संग्रह करे अर्द्धरात्रिमें कामका संग्रह करे अपनी स्त्रीसे काम भोगकरे शास्त्रकी आज्ञा करके अन्यत्र काम पूर्ण करे ॥ ११ ॥

उत्तम धर्म अपनेसे छोटेके पासभी होय तो ग्रहण करे दुष्टोंके द्रव्यको ग्रहण न करे शिष्ट जनोंसे न्यायपूर्वक द्रव्यका संग्रह करें ॥ १२ ॥

पितरोंके ऋणसे छूटे शरीरके विकारोंसे बचे वडोंकी आज्ञा माने पठनसे चौगुणा अधिक श्रवणकरे क्योंकि पढनेमें जो संदेह होताहै सो दूर होजायगा ॥ १३ ॥

जो वस्तु खानेके योग्य अपनेको प्राप्त होय कुटुंब और इष्ट मित्रोंमें बांटकरखाय एकला न खाय क्योंकि भेद होजाताहै धर्म शास्त्रमें एकला खानेका निषेध है पास द्रव्य होयतो कुटुंब और पास रहने वाले गरीब मनुष्योंको देशकालोंमें

यथोचित देकर भरण पोषण करे तो वे लोग सदैव काल अपनी सहायता करेंगे और धर्म भी है न देगा तो बैर करेंगे ॥ १४ ॥

जो बडे हैं उनसे सदाकाल नवना चाहिये उनकी सहना चाहिये जो लोग बडोंकी न सहते हैं उनको बलवान और दुष्टोंकी सहना पडेगी ॥ १५ ॥

बुद्धिमान् शत्रु होय तो उससे सलाह नहीं करना मित्र मूर्ख होय तो उससे गुप्तवार्त्ता नहीं कहनी बुद्धिमान्मित्रसे सलाह पूछना उचितहै १६

बडेसे बलवानसे और स्वजनसे वाद न करें अपना बडापनाचाहे तो सबसे मित्रता करें नम्र होके रहें कोई कठोरभी बचन कहे तो सहें॥१७॥

जो पुरुष स्त्रियोंसे गुप्त बात कहदेते हैं सदा काल पापही करते हैं बहुत बैर और हठ करतेहैं सो जल्दी दुखःपाते हैं जो बडे२ कार्योंका आरंभ करके फिर उनमें आलस्य करजाते हैं वे ऊंटकी नाई नाश होजाते हैं। पुत्रउवाच—महाराज ऊंटका नाश कैसा हुआ कहिये ॥ १८ ॥

पितोवाच—कोई एक ऊंट जातिस्मरथा जाति स्मर क्या पहिले जन्मकी जिसको याद रहतीहै उसको जातिस्मर कहते हैं सो ब्रह्माजीकी तप-

स्या करी जब ब्रह्माजी प्रत्यक्ष हुए उसने वरमांगा कि मेरी गरदन चारसै कोस लंबी होजाय मैं सब जगेकी बनस्पति खायाकरुं ब्रह्माजीने कहा कि ऐसीही होजायगी. ब्रह्माजी चलेगये; तब वह सब जगेकी वनस्पति खाने लगा एक दिन पर्वतके ढुंगेपर अपनी गरदन रखकर सोगया तो आंधी आई वह गर्दन समेटने न पाया पर्वतके गुफामें रखदी वहां एक गीदड और गीदडी आई भूखे थे एकने तलेसे और दूसरीने ऊपरसे गर्दन खाई ऊंटका नाश होगया यह दृष्टांत गूढ है विचारवान् जानसक्ते हैं ॥ १९ ॥

ऐसेही व्यवहार करनेवाला आलस्य करेगा तो नाश होजायगा जिसका बडा ऐश्वर्य है उसकी भी आलस्य करके यही दशा होजाती है विद्यामें आलस्य करेगा तो प्राप्त नहीं होयगी प्राप्त हुईका नाश होजायगा ॥ २० ॥

संसारमें हरएक पुरुषको ज्ञान संपादन करना अवश्य है ज्ञानके तुल्य पवित्र और वस्तु नहींहै ज्ञानसे दुःखदूर होता है ज्ञानसे समदृष्टि बनी रहती है समदृष्टिसे सुख होता है जो पुरुष ज्ञानवानहै सोही पंडित है अज्ञानीको मूर्ख कहते हैं हजार

शोक सौ भय दिन भरमें अज्ञानीको प्राप्त होते रहते हैं ॥ २१ ॥

राजायुधिष्ठिरने भीष्मजीसे पूछा कि महाराज! राज्यसे जो पुरुष भ्रष्ट हुआ हो सो कैसे रहे आत्म घात करे तो बडा पाप होता है फिर राज्य का सुख कैसे प्राप्त होय ॥ २२ ॥

भीष्मजीने इंद्र बलिसंवाद सुनाया सो कहते हैं सुनो एक समय देवासुर संग्राममें इंद्रकी जय हुई राजाबलीका पराजय हुआ तब बली जाके एक पर्वतकी गुफामें बैठा इंद्रने ब्रह्माजीसे पूछा कि पितामहजी कहिये बली कहां है वह मिलेगा तो मारूं कि नहीं ब्रह्माजी ने कहा मारना नहीं जहां शून्य देश शून्य स्थान है वहां मोटा पशु होय उसको बलीजानो वह गधेका रूपधर कर बैठा है इंद्र वहां जाकर देखकर बोला कि, हे राजन्! तेरे वे ऐश्वर्य कहां हैं हजारों स्त्रियां हजारों वाहन हजारों दैत्य तेरी आज्ञामें चलते रहे जैसे तेरा चित्त पहिले था क्या वैसेही अबहै बलीने कहा अरे इंद्र जितने ऐश्वर्य हैं आते हैं और जातेहैं स्थिर नहींरहतेहैं नाशवानहैं प्राकृत पदार्थोंकी यही रीतिहै काल करके सुख दुःख आया

तो घबराना नहीं दुःख आवे तो दीन न होय सुख आवे तो गर्वित न होय सो मैं कालकी परीक्षा करता हूं यह जो श्याम पुरुषहै परमात्मा मेरेको साक्षात् कालरूप मालूम पडताहै इसके बन्धनमें बंधाहूं फिर कोई एक दिन ऐसा होयगा उसी ऐश्वर्यको फिर प्राप्त होऊंगा ऐसे सुन इंद्र चला गया इससे यह सिद्ध हुआ कि चित्तको प्रसन्न रखना चाहिये सो ज्ञानसे चित्त प्रसन्न रहताहै आहार निद्रा भय और मैथुन ये तो पशुओंकोभी होतेहैं ज्ञान करकेही मनुष्योंकी पशुओंसे श्रेष्ठता मानी जाती है॥

राजायुधिष्ठिरने भीष्मजीसे पूछा कि हे पितामहजी ! मनुष्य विश्वका प्यारा कैसे होसक्ता है भीष्मजीने कहा बडे २ कार्यकरें परंतु अहंकार न करें और सत्य बोलें सबका भला चाहे अपनी बडाई अपने मुहँसे न करे औरोंको जैसे उपदेश करें आप वैसे आचरण करें मन वचन कर्म करके किसीको दुःख नदें किसीके दोषकी तर्फ न देखें दूसरेका चित्त राजी होय ऐसी बातकरें तो सबका प्यारा होताहै॥ २४॥

सत्य बोलनेमें बडाभारी पुण्यहै और एक विशेष यहहै कि, सब अनर्थ सत्य बोलनेसे दूर

होजातेहैं सब लोक विश्वास करने लगतेहैं सत्य बोलनेसे मिथ्या पक्षवालोंकी तो हानि होतीहै परंतु फिर कभी वे सत्य पक्षका स्वीकार करेंगे तो सत्य बोलना लाभकारी होगा परंतु सत्य बोले तो प्रिय होय ऐसे बोले ऐसे प्रिय न बोले कि जिसमें असत्य होजाय प्रिय सत्यवादी जगत भरका प्याराहै ॥ २८ ॥

और युधिष्ठिरने पूछा कि जिसको लक्ष्मी प्राप्त होनेवालीहै उसका पूर्वरूप वर्णन कीजिये भीष्मजीने कहा कि सत्य शौच दया दान तप अहिंसा क्षमा धैर्य बडों से नवना ब्रह्ममुहूर्त्तमें उठना परमात्मा का स्मरण करना विद्याका अभ्यास रखना ये गुण पहिले प्राप्त होते हैं लक्ष्मी पीछे प्राप्त होती है और मलिन वस्त्र मलिन केश मलिन मन अतिनिद्रा अति भोजन अति स्त्रीगमन घरमें कूडा, फूटे बर्तन बुहारी न देना लीपना पोतना न करना घरकी मालकनी घरमें पात्र अन्न बिखरनेकी खबर न रखना अशुद्धतासे रसोई करना रात्रिको दहीका भोजन करना बासी बूसी अन्नका खाना सत्तूकाखाना गोबरको पैरोंसे बखेरना अन्नकोपैरोंसे छूना इन गुणोंसे लक्ष्मी दूर होजाती है लक्ष्मीजीने

तो घबराना नहीं दुःख आवे तो दीन न होय सुख आवे तो गर्वित न होय सो मैं कालकी परीक्षा करता हूं यह जो श्याम पुरुषहै परमात्मा मेरेको साक्षात् कालरूप मालूम पडताहै इसके बन्धनमें बंधाहूं फिर कोई एक दिन ऐसा होयगा उसी ऐश्वर्यको फिर प्राप्त होऊंगा ऐसे सुन इंद्र चला गया इससे यह सिद्ध हुआ कि चित्तको प्रसन्न रखना चाहिये सो ज्ञानसे चित्त प्रसन्न रहताहै आहार निद्रा भय और मैथुन ये तो पशुओंकोभी होतेहैं ज्ञान करकेही मनुष्योंकी पशुओंसे श्रेष्ठता मानी जाती है ॥

राजायुधिष्ठिरने भीष्मजीसे पूछा कि हे पिता-महजी ! मनुष्य विश्वका प्यारा कैसे होसक्ता है भीष्मजीने कहा बडे २ कार्यकरें परंतु अहंकार न करें और सत्य बोलें सबका भला चाहे अपनी बडाई अपने मुहँसे न करे औरोंको जैसे उपदेश करें आप वैसे आचरण करें मन वचन कर्म करके किसीको दुःख नदें किसीके दोषकी तर्फ न देखें दूसरेका चित्त राजी होय ऐसी बातकरें तो सबका प्यारा होताहै ॥ २४ ॥

सत्य बोलनेमें बडाभारी पुण्यहै और एक विशेष यहहै कि, सब अनर्थ सत्य बोलनेसे दूर

होजातेहैं सब लोक विश्वास करने लगतेहैं सत्य बोलनेसे मिथ्या पक्षवालोंकी तो हानि होतीहै परंतु फिर कभी वे सत्य पक्षका स्वीकार करेंगे तो सत्य बोलना लाभकारी होगा परंतु सत्य बोले तो प्रिय होय ऐसे बोले ऐसे प्रिय न बोले कि जिसमें असत्य होजाय प्रिय सत्यवादी जगत भरका प्याराहै ॥ २८ ॥

और युधिष्ठिरने पूछा कि जिसको लक्ष्मी प्राप्त होनेवालीहै उसका पूर्वरूप वर्णन कीजिये भीष्मजीने कहा कि सत्य शौच दया दान तप अहिंसा क्षमा धैर्य बडों से नवना ब्रह्ममुहूर्त्तमें उठना परमात्मा का स्मरण करना विद्याका अभ्यास रखना ये गुण पहिले प्राप्त होते हैं लक्ष्मी पीछे प्राप्त होती है और मलिन वस्त्र मलिन केश मलिन मन अतिनिद्रा अति भोजन अति स्त्रीगमन घरमें कूडा, फूटे बर्तन बुहारी न देना लीपना पोतना न करना घरकी मालकनी घरमें पात्र अन्न बिखरनेकी खबर न रखना अशुद्धतासे रसोई करना रात्रिको दहीका भोजन करना बासी बूसी अन्नका खाना सत्तूकाखाना गोबरको पैरोंसे बखेरना अन्नकोपैरोंसे छूना इन गुणोंसे लक्ष्मी दूर होजाती है लक्ष्मीजीने

इंद्रसे यही कहा कि, जो गुण पहिले कहे हैं उनसे मैं पास होती हूं जो पीछे कहे हैं उनसे दूर होतीहूं ॥

चाहिये किसी का किया हुआ उपकारको मानना किसीने अपनीबुराई करी तो भूलना अपनी बडाई न करना अपनी बडाई करना चाहे तो दूसरेकी बडाई करना अपनी निंदा न कराना चाहे तो औरोंकी निंदा न करना ॥ २७ ॥

मनुष्यमें अच्छापना क्या है जिससे दशमनुष्योंको सुख होय,बुरापनाक्याहै जिससे दशमनुष्यों को क्लेश होय लोकमें सुशीलता करके सुख होताहै सुशीलता क्या—बडोंकी वार्त्ताको श्रद्धापूर्वक सुनकर उसके अनुकूल चलना इंद्रियों को असन्मार्गसे रोकना ॥ २८ ॥

कपट नहीं करना चाहिये कपटीसे लोक डरतेहैं कपटीका लोक परलोक बिगडताहै लोक निंदासे डरना चाहिये ख्यातिके लिये धर्म न करें ईश्वरकी आज्ञा मानकर करें अपना हितकारी जानकर करें सबका प्रथम सत्कार वाणी करके करें दूसरा धन करके तीसरा सत्कार मन करके अपनेको अल्पज्ञमाने कष्टकाल आवे तो धैर्य धरे ईश्वरकी सहायलें ॥ २९ ॥

माता पिताकी आज्ञा माने मातकी आज्ञामें विरोधपडे तो पिताकी आज्ञा माने इसमें दशरथ कौसल्या संवाद दृष्टांतहै पिताकी आज्ञामें विरोध पडे तो ईश्वरकी आज्ञा माने इसमें प्रह्लाद चरित्र दृष्टांतहै क्योंकिमाताजोहै सो पिताके अधीन है पिता ईश्वरका अधीन है इसमें माताकी आज्ञा सामान्यधर्महै पिताकी आज्ञा विशेष धर्म है इसी प्रकार पिताकी आज्ञासे ईश्वरकी आज्ञा विशेष धर्म है॥ ३० ॥

सामान्य धर्मक्या—जिसको सबलोक जानतेहैं सो है. विशेषधर्म क्या—जिनपर परमेश्वरकी पूर्ण कृपा होती है तो वे जिसको जानतेहैं करतेहैं सो विशेष धर्महै श्रीरघुनाथजी माता पिताकी आज्ञा मानकर वनवास चले गये लक्ष्मणजी माता पिताकी सेवा त्यागकर रघुनाथकी सेवा करते रहे भरतजी रघुनाथजीके संगजाना छोडकर चरणपादुका की सेवा करते रहे शत्रुघ्नजी साक्षात् भ्राता लक्ष्मण जीको संग छोडकर भरतजीकी सेवामें रहे इससे परमेश्वरने सामान्य धर्म और विशेष धर्म दिखाया यह सिद्ध हुआ एकसे एक विशेष धर्म हैं उसमें भी परमेश्वरके प्यारे जो भक्तहैं उनकी आज्ञा

विशेष धर्म है जिसे शत्रुहनजीने अंगीकार कर दिखाया ॥ ३१ ॥

गृहस्थ आश्रमके सब धर्मोंको परमेश्वरकी आज्ञा सेवा समझकर करना चाहिये क्यों कि यह जो आश्रमहैं धर्मार्थकामोंकी रक्षाके निमित्त बँधा हुआ किलाहै शत्रुओंके जीतनेवाली लडाई किलेकीहै धर्म अर्थ काम ये तीनो इसी आश्रममें सुधरतेहैं ॥ ३२ ॥

आप धर्मकरे औरोंको धर्ममें लगावे क्योंकि जो ईश्वरसे विमुख हो रहेहैं उनको ईश्वरकी तर्फ लगायगा तो ईश्वर राजी होंगे जैसा जिसका अधिकारहै जैसी जिसकी शक्तिहै प्रजाका हित करे सब प्रजा ईश्वरकीहै ईश्वरने मनुष्योंको ज्ञान बलवीर्य शक्ति ये सब इसीके लिये दे रक्खेहैं॥३३

दंभको त्यागकरे दंभ क्या—लोगोंको दिखानेकेवास्ते नेम धर्म आचार विचार करना इसका नाम दंभहै दर्पको त्यागकरे दर्प क्या पूज्योंको न पूजना अपूज्योंको पूजना लोभको त्यागकरे लोभ क्या शरीरके निर्वाह मुवाफिक वस्तु प्राप्त होकर भी संतोष न करना अतिही चाहना करते रहना यह लोभहै यही पापकी जडहै मत्सरको त्याग

करना मत्सर क्या पराया ऐश्वर्य को देखकर जलना, निर्दयता को त्याग करें, सब के ऊपर दया करें, अपने सामर्थ्य के अनुसार दानदें, कार्य मात्र बोले, बहुत न बोले, बहुत बोलेगा तो झूंठ निकलेगा हलका होजायगा, कोई बात अच्छी बुरी जो कोई पूछे तो विचार करे विदून उत्तर नदें ॥ ३४ ॥

सभामें जो कोई कठोर भी वचन कहे तो उस को सहन करे उत्तर उस समय नदें समय पाय कर उत्तर दें क्रोध को जीतना युक्त है क्रोधमें सुख नहीं क्रोध बडाही अनर्थ कराय देता है क्रोध की जड़ काम है काम क्या विषयोंकी चाहना को काम कहते हैं लोभ की उत्पत्ति काम से होती है ॥३५॥

काम तीन प्रकार का है सात्विक काम राजस काम तामस काम जो वस्तु न्याय से प्राप्त होय उस को जैसी परमेश्वर की आज्ञा है वैसे अंगीकार करने को चाहना इस का नाम सात्विक काम है. अपना भोग्य समझ कर हितवस्तु को मन माने जैसे भोगने को चाहना राजस काम है जो वस्तु भोगने योग्य नहीं उस को भोगने चाहना इस को तामस काम कहते हैं ॥ ३६ ॥

क्रोधतीन प्रकारका है सात्विक क्रोध राजस

क्रोध तामस क्रोध जिस किसी के हित करने के लिये उसपर गुस्सा करना सात्विक क्रोध है जैसे बाप बेटे पर गुरु विद्यार्थी पर पढाते समय गुस्सा करता है ताडना करता है धमकी देता है, अपना सुख को कोई रोके तो उस को गाली देना तिरस्कार करना मारना यह राजस क्रोध है. विना प्रयोजन चाहे जिसी को दुःख देना हानि पहुँचाना इत्यादि इस का नाम तामस क्रोध है ॥ ३७ ॥

लोभ तीन प्रकार का है सात्विक लोभ राजस लोभ तामस लोभ—सात्विक लोभ वह है कि जो शरीर निर्वाह के लिये संग्रह किया जाता है आजीविका बढाई जाती है, राजस लोभ वह है कि जो बहुत उद्यम करना झूंठ सांच कर के धन का संग्रह करना सब वस्तु पास होके भी असंतुष्ट रहना, तामस लोभ उसका नाम है जो पाप कर के धन एकत्र किया जाता है निंदित आजीविका बढाई जाती है ॥ ३८ ॥

सात्विक काम सात्विक क्रोध सात्विक लोभ ये तो महात्माओं में भी रहते हैं शरीर निर्वाह के लिये कुछ बिगाड़ नहीं ॥ ३९ ॥

मनुष्यों का हित दो प्रकार से होता है एक

अच्छा आचरण करने कराने से दूसरा अच्छा उपदेश सुनने सुनाने से यह दोनों बडों को सदाकाल चाहिये ॥ ४० ॥

राजा होय तो सब वस्तु अपनी हैं राजा से सब धर्म हैं राजा न होय तो कोई किसी की वस्तु नहीं ठहरती है राजा के भय से सर्व प्रजा अपनी मर्यादामें रहती है राजाविना कोई किसी को नहीं मानता है राजा की निंदा न करें राजनिंदा का बहुत भारी पाप है लोक में भी हानि राजनिंदा से होती है ॥ ४१ ॥

नौकर मालक की बुराई न करे क्योंकि उस के अन्न से शरीर पोषण होता है मालक की निंदा करनेवाले कृतघ्न कहलाते हैं मालकने जो काम बताया हो उस को तन मन से कर दिखावें नौकर को ईर्षा आलस्य और लोभ ये तीनों नहीं चाहिये इन से दूर होकर नौकरी करे स्वच्छता से रहने वाला दक्षता से सब काम करनेवाला मालकपर अनुरागी अहंभाव का त्यागी ऐसा नौकर मालक के अच्छे भाग्य से मिलता है ॥ ४२ ॥

नौकर में अनुरागीपना क्या है मालक की

चीज को न बिगाड़ना मालक के मन को न दुखाना हमेशा मालक की बडाई करते रहना ॥ ४३ ॥

मालक होय तो ऐसा होय नौकर को पुत्र के बराबर चाहे नौकर अन्न वस्त्र आदि किसी वस्तु की तंगी न भोगे इस की खबर लिया करें किसी समय नौकरने कुछ बिगाड़ कर दिया तो क्षमा करे अच्छा काम करे तो इनाम दे गुण देखे तो सराहे ॥ ४४ ॥

माता पिता की अवज्ञा न करे धन से गर्वित न होय पूज्यों के अर्थ में अपना धन लग जायगा तो इह लोक परलोक दोनों सुधरते हैं माता का रक्त पिताका वीर्य इन से शरीर पैदा होता है माता पिता बडे कष्ट से अपनी संतान को पालन पोषण कर बडा कर देते हैं उन के अर्थ में जितना धन ज्यादा खर्च करे उतना थोड़ा है ॥ ४५ ॥

शीलवती भार्या का भरण पोषण अवश्य कर्तव्य है भार्या की सदा काल रक्षा करें सो रक्षा दो तरह की होती है एक नीतियुक्त प्रापंचिक कार्यों में लगाना दूसरी आप और स्त्रियों से जितेन्द्रिय रहना, वेश्या में और परस्त्री में प्रीति करने वाले

अपने दोनों लोक बिगाड़ते हैं उन को देखके और भी बिगड़ते हैं ॥ ४६ ॥

अपना स्वामी जो परमेश्वर है उस को अपनी तरफ से सदाकाल राजी रखना चाहिये सेवासे परमेश्वर राजी होय है सो सेवा दो प्रकारकी है एक आज्ञा सेवा दूसरी साक्षात् सेवा आज्ञा सेवा क्या जिस वर्ण आश्रम धर्म में परमेश्वरने रक्खा है उसी में न्याय पूर्वक रहना उक्त कर्मों को करना साक्षात् सेवा दो तरह की है एक अर्चा मूर्ति की पूजा, दूसरी परमेश्वर के सुरूप रूप गुण विभूति लीला उपकरण ऐश्वर्य संबंध इनका अनुसंधान करना, इस शरीर से करेगा तो दिव्य शरीर मिलेगा जिस को सारूप्य मुक्ति कहते हैं ॥ ४७ ॥

पंचेन्द्रियों का व्यापार और भोग ये सब शरीरोंमें है परमेश्वर को जानने की योग्यता मनुष्यों के ही शरीर में अधिक है अपने को परमेश्वर का दास जानना चाहिये, जिस कर्म में से परमेश्वर प्रसन्न होय उस कर्म को करना चाहिये, परमेश्वर की प्रसन्नता से अखंड सुख प्राप्त होता है लोक सुखों का मिलना तो सहज है ॥ ४८ ॥

सुख में विरोधि कौन है. जो सुख को रोकता है

चीज को न बिगाड़ना मालक के मन को न दुखाना हमेशा मालक की बडाई करते रहना ॥ ४३ ॥

मालक होय तो ऐसा होय नौकर को पुत्र के बराबर चाहे नौकर अन्न वस्त्र आदि किसी वस्तु की तंगी न भोगे इस की खबर लिया करें किसी समय नौकरने कुछ बिगाड़ कर दिया तो क्षमा करे अच्छा काम करे तो इनाम दे गुण देखे तो सराहे ॥ ४४ ॥

माता पिता की अवज्ञा न करे धन से गर्वित न होय पूज्यों के अर्थ में अपना धन लग जायगा तो इह लोक परलोक दोनों सुधरते हैं माता का रक्त पिताका वीर्य इन से शरीर पैदा होता है माता पिता बडे कष्ट से अपनी संतान को पालन पोषण कर बडा कर देते हैं उन के अर्थ में जितना धन ज्यादा खर्च करे उतना थोड़ा है ॥ ४५ ॥

शीलवती भार्या का भरण पोषण अवश्य कर्तव्य है भार्या की सदा काल रक्षा करें सो रक्षा दो तरह की होती है एक नीतियुक्त प्रापंचिक कार्यों में लगाना दूसरी आप और स्त्रियों से जितेन्द्रिय रहना, वेश्या में और परस्त्री में प्रीति करने वाले

अपने दोनों लोक बिगाड़ते हैं उन को देखके और भी बिगड़ते हैं ॥ ४६ ॥

अपना स्वामी जो परमेश्वर है उस को अपनी तरफ से सदाकाल राजी रखना चाहिये सेवासे परमेश्वर राजी होय है सो सेवा दो प्रकारकी है एक आज्ञा सेवा दूसरी साक्षात् सेवा आज्ञा सेवा क्या जिस वर्ण आश्रम धर्म में परमेश्वरने रक्खा है उसी में न्याय पूर्वक रहना उक्त कर्मों को करना साक्षात् सेवा दो तरह की है एक अर्चा मूर्ति की पूजा, दूसरी परमेश्वर के सुरूप रूप गुण विभूति लीला उपकरण ऐश्वर्य संबंध इनका अनुसंधान करना, इस शरीर से करेगा तो दिव्य शरीर मिलेगा जिस को सारूप्य मुक्ति कहते हैं ॥ ४७ ॥

पंचेन्द्रियों का व्यापार और भोग ये सब शरीरोंमें हैं परमेश्वर को जानने की योग्यता मनुष्यों के ही शरीर में अधिक है अपने को परमेश्वर का दास जानना चाहिये, जिस कर्म में से परमेश्वर प्रसन्न होय उस कर्म को करना चाहिये, परमेश्वर की प्रसन्नता से अखंड सुख प्राप्त होता है लोक सुखों का मिलना तो सहज है ॥ ४८ ॥

सुख में विरोधि कौन है. जो सुख को रोकता है

सो पाप है पाप क्या परमेश्वर की आज्ञा न करना, बुद्धिमान् कौन है. जो परिणाम को शोच कर विचारे अर्थात् कार्य अकार्य के फल को जान जाय धर्म में आरूढ रहे, दी हुई दान की वस्तु फेर न ले, फिर लेने से अपकीर्ति होती है और नरक में जाना पड़ता है ॥ ४९ ॥

धर्मात्मा का ऐश्वर्य स्थिर रहता है पापी पुरुष का ऐश्वर्य थोड़े ही काल में बढता है फिर नष्ट हो जाता है धर्म करना विचारे तो तत्काल करे पाप करने का मन होय तो औरों से सलाह करे और देर में करे क्योंकि अधर्म से बच जाय तो बचही जायगा ॥ ५० ॥

कितने धर्म ऐसे हैं कि जिन के करने का अधिकार सब को है जैसे सत्य दया दान अहिंसा परमेश्वर का स्मरण शरणागति इत्यादि और कितने धर्म ऐसे हैं कि जिन में तीन वर्णों को ही अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों को ही अधिकार है जैसे वैदिक कर्म अध्यात्म ज्ञान समाधियोग तपस्या इत्यादि यह तो वेदशास्त्रों का रहस्य है बहुत सूक्ष्म है कर्म ज्ञान भक्तियोग के विषय में पंडित भी मोहित हो जाते हैं ॥ ५१ ॥

पुत्र उवाच–महाराज मरजी होय तो अब कुछ स्त्रियोंका भी धर्म कहो ॥ ८२ ॥

पितोवाच–तन मन वचन करके पतिकी सेवा करना पतिको ईश्वर समझना पति रोगी दरिद्री क्रूर कुरूप होजाय तो भी उसकी सेवा करना स्त्रियों का परम धर्म है पति राजी होगा तो सब सुख यहां और परलोकमें मिलेगा, जो स्त्री कठिन व्रत करती है तीर्थयात्रा इत्यादि करती है तो उसमें यदि पतिको क्लेश होय सो सब वृथा है पतिकी जैसी आज्ञा होय वैसे चले इसका उदाहरण, जैसे जानकीजी रघुनाथजी के संग सदा रहनेवाली आज्ञा के अनुसार एकली अरण्यमें रही, साधारण रीतिसे स्त्रीको चाहिये सासू सुसराकी सेवा करना जो अपने से और पतिसे बड़े हैं उनकी भी सेवा करना क्योंकि घरमें अपने को वे पूज्य कहलाते हैं उनकी सेवा न करने से निंदा होती है आप सासू की सेवा न करेगी तो अपनी सेवा अपने पुत्रकी वधू भी न करेगी क्योंकि जैसे देखेगी वैसे करेगी और सासू का भी यह धर्म है कि पुत्री और पुत्र वधू इन दोनों को खिलाने पिलाने लेने देने में बराबर देखना चाहिये क्योंकि उसको भी अपनी सासू

के घर जाना है इससे गृहस्थ आश्रम बहुत यत्न से चलाया जाना सिद्ध होता है, सब का मुख्य पति तो एक परमेश्वर है सो परमेश्वर की आज्ञा मान कर शास्त्र जानकर औरों की सेवा करें इस का नाम स्वधर्म है ॥ ५३ ॥

सब के लिये साधारण धर्म वह है कि हिंसा न करना दुःख न देना निंदा न करना तिरस्कार न करना इंद्रियों को चंचल न रखना मिथ्या न बोलना चोरी न करनी इत्यादि इन से बचे तो धर्म की रक्षा होती है ॥ ५४ ॥

पुत्र उवाच—अब कुछ राज धर्म इसी तरह सुनाओ ॥ ५५ ॥

पितोवाच—जो प्रजा को धर्म से चलाता है न्याय से पालन कर प्रसन्न रखता है सो राजा कहलाता है, राजा का धर्म रक्षा करने का है जिस के राज्य में प्रजा प्रसन्न रहती है उसका राजापना यथार्थ है, जिस राजा की स्वदेश और परदेशमें कीर्त्ति सदाकाल फैलती रहती है सो राजा धन्य है, राजा को राज्य कर्त्तें समय छःकिले बांधने अवश्य हैं, उनमें मनुष्यों का किला श्रेष्ठ है ॥ ५६ ॥

राजा को प्रथम मनुष्यों की परीक्षा लेनी चा-

हिये अच्छे मनुष्यों का संग्रह कर दान मान सत्कार करके रक्खें, जिस राजा के पास योग्य मनुष्य रहेंगे वह राजा राजत्व करके बढेगा, प्रजा का न्याय मन लगाकर श्रद्धा के साथ करें, जिससे प्रजाकी राजा में भक्ति बनी रहे, ऐसे ही गृहस्थ को भी चाहिये अपने कुटुंब में जितने आदमी हैं उन्हें अपने अनुकूल कर लें, अनुकूलतासे ऐश्वर्य बढता है॥ ८७॥

राजा अपने यहां के जो लिखने वाले कामदार हैं उन की खबर रक्खें जिस से झूठ मूठ लिखदेने का हाल मालूम होजाय क्योंकि राजा लेखके बल से प्रजा का न्याय कर्त्ता है राजा गुप्त और प्रगट दोतरह के जासूस रक्खें जिनसे प्रजा की और पर राजा ओं की सब खबरें मिलती रहें राजा असल बात पाए बिदून मुकद्दमा का फैसला नकरे॥८८॥

राजा सत्य वादी रहें जिस को जो वचन कह दिया होय उस को उस का मतलब पूरा करदें अर्थात् वर्त्ताव के समय बदल नजाय, राजा अत्यंत उग्र न रहें जिसमें कोई बोल नसके, राजा अत्यंत सौम्यनरहें जिसमें कोई अवज्ञा करने लगे, राजा तुच्छ मनुष्य को उच्च आधिकार न दें तुच्छ मनुष्य जो है उच्च अधिकार पाय कर चूहा के नाईं होजा-

ताहै मालक का घात करने को बिचारताहै तो आखिर को आप तुच्छ का तुच्छ ही रहजाता है५९

पुत्र उवाच-महाराज अब तो चूहा का हाल कहो तुच्छ आदमी जिस के नाईं होजाता है ॥ ६० ॥

पितोवाच-एकजगह कोई मुनीश्वर बहुत काल से तपस्या करताथा उस को निग्रह और अनुग्रह दोनों करने की शक्ति प्राप्त हुई वहां एक चूहा अचानक कौवे के पंजों से छूटकर मुनीश्वर के सामने गिरपड़ा देखकर महात्मा मुनीश्वर दया के वश हुआ उसे उठा के अपनी गोद में बैठाया पुच-कार कर निर्भय कर दिया सब बिधि खान पानसे पालन करने लगा, थोड़े काल में एक बिल्ली ने देखा तो हर्ष माना और कहा आज हमारा भोजन ईश्वर की कृपा से दृष्टि गोचर हुआ है इस को ग्रहण करूं सो बिल्ली जितनी फुरती से पकड़ ने को भागी उस से अधिक फुरती से मुनीश्वर ने चूहा बचा-दिया और अपने मंत्र बल से उस चूहा को बिल्ली बना दिया तब चूहा बिल्ली बन कर निडर हो के फिर ने लगा कितने दिनों के बाद उस बिल्ली पर किसी कुत्ता ने पकड़ ने के वास्ते धावा किया तो बिल्ली भाग के मुनीश्वर के पास आई उस अव-

स्था को देख महात्मा को बहुत ही दया आई कहने लगा कि बच्चा तू इस कुत्ता से डरता है तो तूभी कुत्ता हो जाओ यों कहतेही तत्काल बिल्ली का कुत्ता बनगया जंगल में मंगल करने लगा जान वरों की जानहरने लगा तब उस जंगल में एक सिंह भी रहा करताथा अकस्मात् उस कुत्ता को दर्शन दिया तो कुत्ता बहुत ही डरा उसे अपना मृत्यु जाना दौड कर आकर मुनीश्वरके पास उदास होकर बैठा मुनी-श्वर इस बात को दिव्य दृष्टि से जान गया. दया करके कुत्ता का सिंह भी बनादिया परंतु आप तो उस को चूहा ही जानता रहा जब इस बात को बहुत लोग जानगये तो आकर देखा और कहने लगे कि यह तो पहले चूहा था सो इस मुनीश्वर ने सिंह भी बना दिया है इस बातको सुनकर सिंह अपने मन में कहा कि मेरे भाग से मैं सिंह हुआ हूं इस में किस का क्या है अब लोग जो है मेरा चुहा से संबंध लगाते हैं यह ठीक नहीं है परंतु यह मुनीश्वर जब तक जीवता रहेगा तब तक मेरा चूहा का सिंह बनना नहीं छिपेगा चूहा का सिंह कहने से पौरुष हीनता पाई जाती है इस अकीर्ति

को मेटने का यही एक उपाय है जो कि इस मुनीश्वर का आहार कर जाना है पीछे अपना भेद किसी को मालूम न होगा इस निश्चय से मुनीश्वर को पकडने को जितने में उठा उतने में पहुँचवान महात्मा मुनीश्वर अपने निग्रह शक्ति से युक्त हुए मंत्र के बल से पूर्ववत् चूहा का चूहा ही बना दिया मंत्र का बल ऐसा कि उस से सब कुछ हो सक्ता है ऐसे ही तुच्छ मनुष्य उच्च अधिकार में ठहर नहीं सक्ता है आखर को तुच्छ रहजाता है तुच्छ क्या जो बडापना को संभाल नहीं सक्ता है हलकी बातों पर ख्याल रखता है उस का नाम तुच्छ है ॥६१॥

राजा समय के अनुसार वर्ते सब की बातों सुने माली की तरह राज्य का व्यवहार करे माली कैसा व्यवहार करता है और राजाको कैसे करना चाहिये सो अब कहते हैं माली बहुत बढे हुए जो वृक्ष हैं उन को छांट देता है ऐसे ही राजा अपने राज्य में जो तन मन धन से बढे हैं उन को घटाय दे माली बाग में जो वृक्ष सूख गये हैं उन को जल देकर हरे करता है ऐसे ही अपने राज्य में तन मन धन करके दुर्बल हैं उन को राजा अन्नवस्त्र धन अभय वचन देके पुष्ट करे जैसे माली बाग में

पास २ मिले हुए वृक्षों को अलग २ करके दूर २ जमाता है ऐसे ही राजा अपने राज्य में एकमता हुए पुरुषों को अलग २ कर अपने पास बना रक्खे जैसे माली बाग से फल फूल उतार लेता है ऐसे राजा प्रजासे कर, दंड लिया करें ॥ ६२ ॥

राजा व्यसनों से बचे, व्यसन क्यामदिरा पीना जूवा खेलना सिकार मारना स्त्रियों को भोगना इन को व्यसन कहते हैं. इन को करे तो समयपर करें आसक्त न होय राजा आलस्य को त्यागे राज्य के अंगों को समय पाय के देखते रहे, अंग क्यामुसाहब मित्र खजाना मुलक किला फौज प्रजा इन सातों को अंग कहते हैं राजा के समेत अष्टांग भी कहते हैं राजा नित्य प्रति उद्यमी रहे अपने पास बैठनेवालों से हांसी न करे क्योंकि हांसीमें राजा की अवज्ञा करने लगेंगे वस्तुओं को हरने लगेंगे जिन को राज्यमें दावा है राजा उनका विश्वास न करे, जिनको अपना ही आसरा है राजा उनकी परवरष करे आगे के लिये उनकी बँदोबस्ती कर दे परीक्षा करे हुये मनुष्यों का विश्वास फिर परीक्षा करके करे दीन रोगी अनाथ जो हैं राजा इन की पेटकी खबर रक्खे ॥ ६३ ॥

राज़ा ऐसी बातों से भी परिचित रहे कि कोई सच्चा मामला झूंठा तो न होगया पक्षपात करके किसी दीन ग़रीबकी सुनाई न होती हो कोई उस पर ज़ुल्म करे तो वह क्रोध दृष्टि करता है उससे तो राज्य नष्ट होजाता है उनकी बहुत खबर रखनी चाहिये सो यह सब वार्ता कब बनती है जब परमेश्वर की पूर्ण सहायता होती है ॥ ६४ ॥

राजा अपने ऊपर भी शिक्षक रक्खे, जो कोई अनुचित कार्य अपने से होता होय तो सूचना कर देवें माडी बात को मने कर देवें ॥ ६५ ॥

राजा अपने को परमेश्वर का कारिंदा समझे क्योंकि पालन का काम विष्णु भगवान् का है सो विष्णु का आसरा लेना चाहिये विष्णु शब्द सत्व की मूर्तिका वाचक है जिसकी उपासना करने से सत्वगुण प्राप्त होता है उपास्य के गुण उपासक में आते हैं सत्वगुण करके ज्ञान होता है ज्ञान से सत्य असत्य की परीक्षा होती है ॥ ६६ ॥

राजा रागद्वेष और पक्षपात छोडकर परमेश्वर की सेवा समझ के मनुष्यों को अपने २ वर्णाश्रम धर्मोंमें लगा रक्खें, झूठे, लुटेरे, ठग, चोर, इन पर दया न करे इन को दंड दे राजा नित्य शूर नित्योत्सा

ही रहै गृहस्थ पुरुष भी इन बातों के अनुसार चले तो उत्तम ऐश्वर्य को प्राप्त होसक्ता है॥ ६७॥

राजा को यान आसन संधि विग्रह द्वैध आश्रय ये छः कर्म अवश्य चाहिये क्योंकि राजनीतिमें कहाहै, यानक्या पराया राज्यपे चढाई करना आसन क्या पराया राज्य अथवा सरहद्दमें अपनी फौज रखना संधि क्या शत्रु को वा शत्रुके कुटुंब को अथवा उसके पक्षवालों को बने जैसे अपने तरफ कर लेना विग्रह क्या मौके के साथ लडना द्वैध क्या शत्रुकी सेनामें फूट पैदा करना अथवा अपनी सेना को कई हिस्से कर कुछ सेनालेके शत्रुसे लडाई करना कुछ सेनासे शत्रुका किला घेरना कुछ सेनासे अपनी रक्षा करना, आश्रय क्या शत्रुको न जीत सके तो चक्रवर्ति राजा का आसरा लेना॥ ६८॥

पुत्र उवाच—महाराज चक्रवर्ति राजा की पाहिछान तो पहिले कहो॥ ६९॥

पितोवाच—चारों समुद्रोंतक जिसका राज्य का अधिकार सबके ऊपर हो जिस के पास चौदा रत्न निरंतर रहते हों उस का नाम चक्रवर्ति राजा है, चौदा रत्न क्या—सब वाहन में रत्न के समान रथ, सब आयुधों में रत्न के समान चक्र,

ढाल तरवार, सब रत्नों में रत्न के समान माणिक्य हीरा जवाहिर, सब निसानों में रत्न के समान झंडा सब धन में रत्न के समान खजाना, इन सातों को निर्जिव रत्न कहते हैं, और सब स्त्रियों में रत्न के सदृश रानी, सब पंडितों में रत्न के सदृश पुरोहित सब नौकरों में रत्न के सदृश सेनापति, सब कारीगरों में रत्नके सदृश शिल्पि, सब जानवरों में रत्नके सदृश हाथी घोडा, सब मनुष्यों में रत्नके सदृश फौज, इन सातों को सजीव रत्न कहतेहैं ७०

मुमुक्षु जन इसीतरह परमेश्वर का अनुभव करते हैं, क्योंकि चक्रवर्ति राजा का आसरा लेने से निर्भय हो जाता है निर्भय से शत्रु को जीत सक्ता है परब्रह्म परमात्मा ही राजाधिराज चक्रवर्ति राजा है उनने अपनी कृपा कर के जीवात्मा को नौदरवाजेवाला शरीर रूपी नगर देके उस का राजा बनाया बुद्धिरूपी रानी मनरूपी मुसाहब कर दिये अंतःकरणरूपी गद्दीपे बैठ के राज्य का अनुभव करने लगा महामोहरूपी तस्कर राजाने विचार किया कि, इस नगर के ऐश्वर्य को मैं भोगूंगा जीव राजा को वश करूंगा. सो अपने योद्धाओं को बुलाय के आज्ञा दी कि, इस नगर के राजा को

घेरो मुसाहब को बांधो रानी को रोको और सब योद्धाओं को हटाओ तब सब सेना तयार होकर शरीररूपी नगर को घेर लिया हमला करने को आये, सो जहाँ देखे तहाँ अहंकार ममकार काम,क्रोध,कपट, मद, मान,लोभ,दंभ,मत्सर, दर्प, हिंसा ये सब दिखाई देने लगे ॥ ७१ ॥

तब जीव राजाने देखा तो मन मुसाहबसे बुद्धि रानीसे सत्संगरूपी और मंत्रियों से सलाह करी अपनी दैवी सेना को लड़ने के वास्ते आज्ञा दी सो दोनों तर्फ से युद्ध हुआ प्रतिदिन छः पहर की लढाई ठहरी इस देवासुरसंग्राम में मोह से ज्ञान का युद्ध हुआ अहंकार ममकारों से विवेक का युद्ध हुआ काम से भगवद्भक्ति लडी क्रोध से शांति लडी लोभ से संतोष लडा दंभ से सत्य का युद्ध हुआ कपट से आर्जव का युद्ध हुआ मद से दम लडा मान से शील लडा मत्सर से साम्यने युद्ध किया दर्प से विचार भिडा हिंसा से दया झगडी और क्षमा विज्ञान वैराग्य ये सब चारों ओर से लडने लगे वडाभारी संग्राम हुआ राजनीति के पांचो उपाय करने में आये परंतु दैवी सेना को लेके जीव राजा महामोह राजा को जीत न सका

तब क्या करना चाहिये छठवीं जो राजनीति है सो करना चाहिये उसको आश्रय कहते हैं आश्रय क्या श्रीमहाराजाधिराज चक्रवर्ति कुमार जो हैं उन की शरणागति करना अर्थात् उन की शरण जाना ॥ ७२ ॥

शरणागति छः प्रकार की है प्रथम अनुकूल संकल्प द्वितीय प्रतिकूल वर्जन तृतीय रक्षक में विश्वास चतुर्थ गोप्तृत्ववरण पंचम आत्मसमर्पण षष्ठी दीनता ॥ ७३ ॥

अनुकूल संकल्प क्या-परमेश्वर के तरफ लगने का विचार करना जैसे बिभीषण ने जान की रघुनाथजी को दे के रावण को मिलने के लिये समझाया इस का नाम अनुकूलसंकल्प है ॥ ७४ ॥

प्रतिकूल वर्जन क्या-परमेश्वर के जो विरोधी हैं उन को वासना समेतपरित्याग करना जैसे बिभीषण ने रावण को समझाया तो रावणने नहीं माना तब उस को बिभीषण ने ईश्वर विरोधी जान कर त्याग किया इस का नाम प्रतिकूल वर्जन है ७५॥

रक्षक में विश्वास क्या-परमेश्वर हमारी रक्षा करेंगेही ऐसा दृढ विश्वास करना जैसे बिभीषण रघुनाथ जी को रक्षक जानकर तत्काल चलाआया

किंचित् भी संशय न किया ये हमारी रक्षा करेंगे ऐसा विश्वास किया इस का नाम रक्षक में विश्वास है ॥ ७६ ॥

गोप्तृत्व वरण क्या-परमेश्वर से अपना अंगीकार करने के लिये प्रार्थना करना जैसे विभीषण ने सब को छोड कर आकाश में खडा होकर निरालंब आर्तस्वर से पुकार कर कहा इस का नाम गोप्तृ-त्ववरण है ॥ ७७ ॥

आत्मसमर्पण क्या अपना हाल है जैसा परमे-श्वर को उन के अतिप्यारे महात्मा ओं के मुख-से सुनाय कर निष्कपट से उस का होय कर रहना जैसे विभीषण अपना वृत्तांत रघुनाथजी को सुग्रीव के मुख से सुनाया आप रघुनाथजी का कहलाया इस का नाम आत्मसमर्पण है ॥ ७८ ॥

दीनता क्या-हम अपनी रक्षा कर ने को समर्थ नहीं आप हमारी रक्षा करो ऐसे कह के मन वाणी से कृपण होजाना इस तरह रघुनाथजी की विभी-षण ने शरणागति करी ॥ ७९ ॥

इस रीति से परमेश्वर का आश्रय कर क निर्भय हो जाय तो परमेश्वर आप ही सर्व शत्रुओं को नाशकर जो हमारा राज्य है सो हम को प्राप्त

कर देंगे जैसे बिभीषण को लंका का राज्य प्राप्त कर दिया ॥ ८० ॥

रक्षक में ज्ञान दया शक्ति ये तीन गुण चाहिये इन तीन गुणों के विदून जो रक्षक है सो तुच्छ है तुच्छ की शरणागति करे तो फलीभूत नहीं होती है जैसे रघुनाथजी ने समुद्र की शरणा गति करी परंतु निष्फल हुई क्यों समुद्र में ये तीनों गुण नहीं थे ये गुण जिस में होय उस को रक्षक मानकर शरणागति करे तो फल प्राप्त हो सक्ता है जैसे समुद्र ने राम बाण के भय से शरणागति करी तो रघुनाथजी ने करुणा कर अपने अमोघ शर को मरुदेश में छोडकर समुद्र को बचाया इस से सर्व शक्ति सर्वनियंता ज्ञान दया निधि परमेश्वर की शरणागति करना चाहिये ॥ ८१ ॥

पुत्र उवाच–शरणागति में जो नेम है सो भी कहिये ॥ ८२ ॥

पितोवाच–नेमक्या शरणागति में कोई नेम नहीं है सब के करने की है सब फल देती है जब रक्षक प्राप्त होय तब ही करनी चाहिये देशकाल का कोई इसमें नेम नहीं रघुनाथजी ने शुद्ध होके करी, द्रौपदी ने रजस्वला होके करी सो शुद्धि

अशुद्धि का भी इसमें नियम नहीं द्रौपदीने अपनी लज्जा की रक्षा के निमित्त करी सुग्रीवने राज्य के ताईं करी गजेंद्रने ग्राहसे छूटने के लिये करी कागासुरने प्राणों को बचाने के अर्थ करी इससे शरणागतिमें फलका भी कोई नेम नहीं शरणागत की रक्षा करना समर्थ का धर्म है जो समर्थ होकर शरणागत की रक्षा नहीं करे है उस का सब पुण्य शरणागत लेजाता है अपना पाप उसे देजाता है८३

शरणागति में विश्वास चाहिये हमारी रक्षा परमेश्वर अवश्य करेंगे शरणागति में दूसरा अवलंबन चाहिये क्योंकि हनुमानजी को मेघनादने ब्रह्मास्त्र करके बांधा तब राक्षसों ने उसपर विश्वास न किया और दूसरे बंधनों में बांधा तो ब्रह्मास्त्र छोड गया इसीतरह दूसरे भरोसे से शरणागति बिगड जातीहै॥

और शरणागति का खुलासा कहते हैं परमेश्वर को अपना आत्मा समर्पण कर दे और अपना कर्म समर्पण कर दे उस का फल समर्पण कर दे और सब प्रकार का अपना भार अर्पण कर दे हमारे इस लोक के उस लोक के बनानेवाले परमेश्वर है ऐसा विचार कर सुखपूर्वक रहें मनुष्यदेहपाने का यही लाभ है ॥ ८५ ॥

पुत्र उवाच—जो शरणागत है सो कालक्षेप कैसे करें कहिये ॥ ८६ ॥

पितोवाच—परमेश्वर के स्वरूपको विचारता रहे उसका स्वरूप सर्व व्यापक सर्वको प्रेरणा करनेवाला चेतना चेतनों के भीतर रहनेवाला सब का धारक और भोक्ता है सगुण है दया गुण पूर्ण है सर्व शक्ति है सर्वशक्ति क्या करने न करने और तरह करने को समर्थ है वात्सल्य गुण युक्त है वात्सल्य गुण युक्त क्या आश्रितों के दोषों को नहीं देखता है अथवा भोग्य मानता है सौशील्य गुणयुक्त है सौशील्य गुणयुक्त कैसे—बहुत बडे होके बहुत छोटे से निष्कपट मिलता है सौलभ्य गुणयुक्त है, कैसे—दुर्लभ होके अति सुलभ होजाता है सो परमेश्वर सब के स्वामी है चेतना चेतनों का नियंता है असंख्यात ब्रह्मांडों का पति है अनंत कोटि ब्रह्मांडों में जो चेतन हैं उन के जितने जन्म कर्म हुए हैं होने वाले हैं होरहे हैं उन सब को देखता है हस्तामलक के समान, सब परमेश्वरके दृष्टि गोचर है पूर्ण है पूर्ण क्या सब वस्तुओं को देता चला जाय तो घटे नहीं उस की कृपा करके और देवता सिद्ध भी सब वस्तुओं को देते चले जाते हैं तो घटते नहीं

सो हमारा अंतर्यामी है सुहृद् है ब्रह्मासे आदि लेके चींटी पर्यंत सब उसकी विभूति है. विभूति क्या जिस को जहां चाहे तहां प्रेरणा कर देवे तो हो सकें ॥ ८७ ॥

और कैसा परमात्मा है—वीर्य और रजसे ऐसे मनुष्य करदेता है कि एक २ मनुष्य हिंदुस्थान और विलायत का राज्यकर्त्ता है मोर में चित्र विचित्र रंग कर दिये है तो ते में हरा रंग बनाया हंसो का रंग सपेद कर दिया है चाहे बद्ध का मुक्त कर देता है अथवा मुक्त का बद्ध, वह परमात्मा हमारा संबंधी है रक्षक है शेषी है भर्ता है ज्ञेय है स्वामी है आधार है आत्मा है भोक्ता है ॥ ८८ ॥

परमेश्वर हमारा संबंधी कैसे हैं सब लागती परमेश्वर में ही होती है जीव और प्रकृति का परमेश्वर से सदैव काल संबंध है शेषी क्या शरीर आत्मा यह दोनों जिस के शेष है उसका नाम शेषी है जैसे शरीर आत्मा का शेष है वैसे आत्मा परमात्मा का शेष है चाहे इसको वह जैसे करसक्ता है और रख सक्ता है, ऐसे शरणागत पुरुष परमात्मासे प्रीति लगाकर कालक्षेप करते हैं ॥ ८९ ॥

और कैसा परमात्मा है ज्ञान, दया, शक्ति, क्षमा,

गुणों करके युक्त है अज्ञानियों को ज्ञान, अशक्तों को शक्ति, अपराधियों को क्षमा, दुःखियों को दया, उपयोगी है अपने भक्तों के लिये अनेक अवतार धारण करता है, अनेक लीला करता है और पालन करता है, अंतमें सबसृष्टि को अपने में लीन करता है ॥ ९० ॥

पुत्र उवाच-महाराज जड़ चेतनों की सृष्टि कैसी हुई सो कहिये ॥ ९१ ॥

पितोवाच-प्रलय के समय प्रकृति और जीव सूक्ष्मरूप करके परमात्मा में रहते हैं उससमय प्रारब्ध का भोग नहीं है लिंगदेह भी नहीं है जैसे वड़के बीजमें वड़का वृक्ष रहता है मालुम नहीं देता है ऐसे ही परमात्मा में जड़ चेतन रहते हैं अलग नहीं जान पडते हैं उससमय जाननेवाला कोई अलग रहता नहीं सृष्टि के हुये पीछे ही सब दिखाई देते हैं ॥ ९२ ॥ हुए हैं होने

सृष्टि के पीछे भी कितने जीव ली है हस्ताम- जड़ के तुल्य पड़े रहते हैं जब क गोचर है पूर्ण जगन्माता लक्ष्मीजी उनपर निग चला जाय तो श्रीपति से कहती है कि हे प्राणेश! वता सिद्ध भी पुत्रहैं, शिष्यहैं, दयाके पात्रहैं, असंर तो वटते नहीं

ये सदैवकाल आपकी सेवा में रहते हैं आनन्द करते हैं अखंड सुख पाय रहे हैं इस सुख को भोगने की योग्यता उन को भी है जो कि, प्रकृति में डूबे पडे हैं, अब उन को भी इस लायक करो कि, जो आपकी सेवा है सो करैं और आपका आनंद पावैं आप की भक्ति प्राप्ति करैं नित्य मुक्तों के नाईं अष्टगुणों कर के युक्त होकर नित्य सुख भोगैं तब श्रीपतिने लक्ष्मीजीकी प्रार्थना से इस चराचररूपी जगत की सृष्टि करी, इसीतरह परमेश्वर प्रतिप्रलय के पीछे सृष्टि करते हैं, इस की संख्या नहीं है जब सृष्टि रची है तब जीवों के पूर्वकर्म, वासना, रुचि, इच्छा, प्रयत्नों के अनुसार मन, बुद्धि, इंद्रिय, शरीर दिये हैं कितने शरीर एक इंद्रिय के हैं, कितने दो इंद्रियों के, कितने तीन के, कितने चार के, कितने पांच के कितने सुखी हैं, कितने दुःखी हैं, और सब गुणो में ... गण जो ज्ञान है सो भी दिया ॥ १३ ॥

आत्मा यह ने जीव शरीर पाय के ज्ञान का अवलंबन शेषी है जैसे ...यों के वश होकर उन को तुच्छ विषयों परमात्मा का ... वारंवार जन्म मरणों को प्राप्त होते हैं है और रव स...यों को भोगते हैं मनुष्यशरीर पाय त्मासे प्रीति ल...सुखों को ही चाहना करते हैं यह और कैसा पयोनियों में प्राप्त है ॥ १४ ॥

कितने पुरुषों का कहना यह है कि, बहुत संतान न होंय तो सुख है, तो सुअर सुअरी यों की संतान बहुत होती है, कोई कहै बहुत भोजन करने में सुखहै, तो हाथी सबसे ज्यादा खाताहै, कितने कहते हैं बहुत स्त्री भोगने में सुख है, तो कबूतर से अधिक स्त्री को कौन भोग सक्ता है, कोई कहै हैं कि बहुत कुटुंब होने में सुख है, तो मुरगे के कुटुंब से बहुत क्या होगा उस का परिवार साथ ही रहा कर्त्ता है, कोई कहैं मांस खाने में सुख है तो सिंह सदैव काल खाता है परंतु इन को सुख होना दिखाई नहीं देता उलटा दुःख होना प्रगट होताहै ९५

लाल पक्षी स्त्री के पीछे लडता है बुल बुल चुगे के साथ लडता है ये काम तो पशु पक्षियों में भी हैं विषयभोग अग्नि में आहुति के समान हैं जितनी डाली जाय उतनी ही ज्वाला [illegible] जायगी जो पुरुष अंतसमय पर्यंत [illegible] हैं होने स्तनों की याद कर्ते हैं वे तो योनि [illegible] हस्ताम-होंगे और मुखसे स्तन पीवेंगे फिर [illegible] गोचर है पूर्ण भी यही होगा ॥ ९६ ॥ [illegible] चला जाय तो

माता के गर्भ में रहते समय बडा [illegible] वता सिद्ध भी जन्म के समय उस से बडा दुःख है तो घटते नहीं

पीछे उस बच्चे को तो अतिही दुःख है शिर में दरद होय तो पेट की दवाई करते हैं भूख से रोये तो बिमारी समझते हैं शिशु अवस्था में अपना दुःख बतला नहीं सक्ता. जूं लीक काटती होंय तो खुजाय नहीं सक्ता दांत डाढ़ निकले तो और ही दुःख होता है ॥ १७ ॥

बाल अवस्थामें और बालकों का खाना पहिरना देख के दुःखपाता है, अपने को उसी तरह खाने पहिरने न मिले तो प्राप्त हुआ जो वस्तु है उस को भी फेंक देता है जवानी आई तो विवाह हुआ स्नेहरूपी बेडी पडी उसी को बडा सुख मानता है जब पुत्र पैदा हुआ तो दूसरा बंधन हुआ ज्यों ज्यों कुटंब बढा त्यों त्यों तरह तरह के बंधनों कर के बंधता चला जाता है अनेक वस्तु-
ओं की चाहना करके नहीं मिलने से दुःख
आत्मा ये॰ । १८ ॥
शेषी है जैसे होता है तब कमाया हुआ धन खर्चना
परमात्मा का है तो स्त्री पुत्रादिक चोर लेते हैं तो
है और रख स घर में जादा खर्च होते देख कर मने
त्मासे प्रीति ल इसका तिरस्कार करते हैं तब बहुत
और कैसा प जैसे जैसे इंद्रियें शिथिल हो जाती हैं

वैसे २ लोभ बढता जाता है परंतु वैराग्य नहीं होता है ॥ ९९ ॥

इस संसार में धन कर के कुछ सुख नहीं क्योंकि सब का अविश्वास हो जाता है जो मन में आई सो भली बुरी करने लगता है मत्त होकर पुण्य पाप का विचार नहीं करता है कभी कभी पाप भी करता है तो डरता नहीं धन प्राण के समान मित्रों से भी वैर कराय देता है ॥१००॥

पुत्र कर के भी कुछ सुख नहीं क्योंकि पैदा होता है तो स्त्री का सुख हर लेता है बड़ा हो जाता है तो धन को हर लेता है मर जाता है तो बड़ा ही कष्ट हो जाता है इस विचार से तो पुत्र नहीं बल्कि शत्रु है ॥ १०१ ॥

स्त्री कैसी है स्त्री से भी कुछ सुख नहीं क्योंकि स्मरण करने से ताप होता है देखने से उन्[illegible] होता है स्पर्श करने से मोह होता है संभे हुए हैं होने से बल और तेजका नाश होता है ॥ १ है हस्ताम[illegible]

पुत्र उवाच—महाराज आप कहते [illegible] गोचर है [illegible] पुत्र आदिकों से कुछ सुख नहीं है [illegible] चला जा[illegible] व्यास पराशर इत्यादि ऋषि [illegible] वता सि[illegible] क्यों करे ॥ १०२ ॥

पितोवाच—व्यास पराशर आदिक जो ऋषि हैं उनने केवल ईश्वर की प्रेरणा से भावी को जान कर स्त्रियों से प्रसंग किया कुछ आसक्त होके नहीं कितने महात्मा संसारी के तरह से वर्त्ताव कर्ते हैं परंतु उस में लिप्त नहीं रहते हैं कालरूपी परमेश्वरको देखते हैं उस से डरते हुये अपने काल को चलाते हैं तो दोष उन में व्याप्त होता नहीं इस विषय में एक दृष्टांत है॥ १०४ ॥

किसी एक नगरमें पुंडरीक नाम राजाथा एक दिन शिकार खेलने को अरण्य में गया कई मृग मारे मध्याह्न होगया तब परिश्रम से अधिक क्षुधा लगी आई आहार के लिये वनमें फल मूल हेरता हुआ चला तो एक जगे बहुत से ऋषि लोग बैठे हुए दिखाई दिये वहाँ जाकर राजा उनको प्रणाम करके [illegible] कि हे तपस्वी महात्मा मैं भूखा हूँ मेरी क्षुधा आत्मा [illegible] ऋषि बोले अच्छा यदि तुम्हारी [illegible]रूपी है जैसे [illegible] इस बगीचे में एक आम्र का वृक्ष परमात्मा का [illegible] तुमसे जितने खाये जाँय खाजाओ है और रख [illegible] देखा तो पकेहुये सुगंधिफल बहुत लगे [illegible]तमासे प्रीति [illegible]तार के खाया और अपना नगर चला [illegible] और कैसा प[illegible]समय काम का प्रकोप हो आया

अंतःपुरमें जाके कितनीही स्त्रियों को हरादिया तोभी काम शांत न हुआ तब राजा के मन में कल्पना उठी कि मैंने केवल दोफल खाये इतने से ही मेरी यह अवस्था है तो उन ऋषिओं की भी यही अवस्था क्यों न होगी जो नित्यप्रति इन्हीं फलों को खाते हैं सो दूसरे दिन ऋषियों के पास जाकर हाथ जोड के कहताभया कि महाराज! अपराध की क्षमा करनी चाहीये मैं एक बात पूछने को आयाहूं कल आप के कहने से इस आम के दोफल उतार कर खाये उस से काम का जो विकार हुआ अभीतक शांत नहुआ आपलोग गृहस्थ भी नहीं हो इसी आम के फल खाते होंगे तो आपकी क्या अवस्था होती है इस प्रश्न का उत्तर दीजिये तब ऋषि बोले कि हां राजा हमतो इसी आम के फल खाके अपने दिन पूरे कर्त्ते हैं ... प्रश्न के उत्तर देने को यह समय नहीं हुए ... परसों के दिन तुम्हारी अकाल मृत्यु ... है ... इस प्रश्न को करो जिस से तुम्हारा ... गोच ... राजा घबरा उठा पूछा कि हे शरणा ... चला ... अगरऐसाही है तो मेरे जीने का उप ... वता ... ही बताओ ऋषि बोले और तो उपा ... तो घटै ...

इस आम के फल जितने हैं उतने उतरा के ले-
जाओ किसी से इसबात को कहो मत परसो
मध्यान्हतकये सब फल खाजाओ पीछे हमारे पास
आजाओ और बतावेंगे तब राजा उन फलों को
उतरा के लेगया एकांत महल में बैठ के खानेलगा
तो रानीने पूर्वदिन का आनंद देखाथा सो और
बहुतसुंदरस्त्रियों को शृंगार कराके आप भी शृंगा-
रकर पति के पास पहुँची देखती है तो राजा
आतुर कि तरह फल खारहाहै अपनी तरफ देखता
भी नहीं रानी बोली सरकार मरजी होय तो मन
मोंहिनी स्त्रियाँ तयार हैं राजा बोला नाम मत लेओ
तुम भी यहाँ से चली जाओ तब रानी के मन में
विचार हुआ कि मैंने देरीकरी इस कारण से राजा
रुष्टहुए हैं अब इन को मनाना चाहिये सो पास बैठ
बोली [illegible]भाव कटाक्ष के साथ बहुत कुछ चेष्टाकरी
शान्त करीं प्रति अङ्ग अपना अंगके संग कियातो
इच्छा है तो देखकर रानी लज्जित होके चलीगई
है उसके फल [illegible]कर दोरात्रि एक दिन ऋषियों के
राजाने जाके [illegible] होके आमकी त्वचा को भी न
हैं दो फल उत[illegible]या तीसरे दिन मध्याह्न में ऋषियों
गया [illegible] [illegible]पहुँचा ऋषि बोले कहो राजा

सब फल खाये कि नहीं काम का प्रकोप अब कै बार तुम को कितना हुआ कितनी स्त्रियाँ हराईं, तब राजा बोला महाराजहो काम क्या होता है मालुमभी नहुआ नपुंसकके समानस्वभावरहा,मेरा कथन सत्यमानो, इसके बाद सब ऋषि मिलके बोले तुम्हारे प्रश्न का उत्तर होगया जाओ, संसारी लोक साँसारिक धर्मों को इसतरह सेवन कर्त्तें हैं कि जैसे तुमने पहले दफे फल खायेथे महात्मा लोग ऐसे सेवन कर्त्तें हैं कि जैसे तुमने पीछे दफे फल खाये. समाधान पाके राजा चलागया ॥ १०८ ॥

इसका तात्पर्य यह है कि आसक्ति बिना स्त्री ही क्या मात्र संसार के भोगोंको भोगनेसे भी सुख नहीं कहलाता है महादेवजी निस्संग हो कर भी रात दिन पार्वती से प्रसंग करते हैं परंतु उसे सुख नहीं माने हैं विद्याधराधिपति [illegible] चित्रकेतु देखके निंदा करी तो क्रोध न किया प्रस[illegible]ए [illegible]त्र हुये. [illegible] मानते तो क्या क्रोध न कर्त्तें उनने [illegible] तो तपस्वि[illegible] की परीक्षा लेनेके लिये पार्वती से गाच[illegible] प्रसंग [illegible] विप्रोंकी परीक्षा लेनेके लिये श्मशानमें वास [illegible] वैष्णवोंकी परीक्षा लेनेके लिये चितावता [illegible]का भस्म [illegible]लकी हड्डी और हाथी का चमडा रुपी व[illegible] रुद्राक्ष जटा

दि इनको धारण किया सुख मानकर नहीं किया समर्थ देवताओंके तात्पर्यको जाने विदून उनके समान असमर्थ मनुष्य करेंगे तो बिगडेंगे॥ १०६॥

कोई कहे हैं विप्र नारायण मुनि परम भक्त महात्मा रहे उनने श्रीरंगनाथ की सेवा को छोडकर वेश्या के प्रसंग में लगे रहे, तो अब उसका उत्तर देते हैं सुनो परमेश्वर श्रीरंगनाथ की मरजी उस वेश्याको मोक्ष देनेमें वेश्या का स्वभाव महात्मा को दिखाने में उसका अंतिम फल अनुभव कराने में था जो विप्रनारायण मुनिको वेश्याप्रसंगमें लगाया आखिरको उसी रंगनाथ भगवानने अंगीकार किया यह प्रसंग भार्गवपुराण और भक्तमालमें लिखाहै ॥ १०७॥

कोई कहते हैं कि ब्रह्माजी सब देवताओं में बडेहैं उन्होंने अपनी बेटी सरस्वती से प्रसंग किया, तो इस का उतर यह है, सरस्वती तो ब्रह्माजी की ही स्त्री है वाचाओं की देवता कहलाती है ब्रह्माजी को सरस्वतीपति कहते हैं महाप्रलय के समय ब्रह्माजी को जबान में लय होगयी थी फिर सृष्टि समय उसी जबानमें से प्रगट होगई इससे बेटी कहने लगे थे ब्रह्माजी ने उससे प्रसंग की चाहना करके यह दिखाया कि लोकापवाद ऐसा

है कि मनुष्य को तो क्या कहना परंतु मेरको अर्थात् ब्रह्माजी को भी दोषी बना देता है॥१०८॥

जबतक बुद्धि बल बना है शरीरको शक्ति है बुढापन आया है शास्त्र के उपदेश पायके विश्वास के साथ अपना हित विचारना चाहिये पीछे हाथ मींजकर पछताना होगा ॥ १०९ ॥

पुत्र उवाच—अब तो कृपा करके जीवात्मा के स्वरूप को वर्णन करके समझाइये यदि मुझे सुन नेके लिये अधिकारी समझते हो, तो कृपा करके यह भी कहो परमात्मा कैसे प्रसन्न होताहै उसके प्रसन्न होने में सुलभ उपाय कौनसा है परमात्मा के प्रसन्न होनेसे कौनसे सुखकी प्राप्ति होती है हम को आज तक इस संसारमें क्यों डाल रक्खा है इस शरीररूपी पिंजरा में इस आत्मा को पक्षीके बराबर किसने बैठाल रक्खा है इन बातोंको जानने न दिया उस सुखको प्राप्त होने न दिया अच्छी तरह कहो ॥ ११० ॥

पितोवाच—अब कहते हैं मन लगाकर सुनो सुनते २ समझ में आवेगा फिर मनन करने से अनुभव होगा तुम्हारा जो प्रश्न है वेदांत विषयका है चित्तको स्थिर करके सुनोगे तो समझोगे पहिले

जीवस्वरूप का वर्णन है जीव कैसा है ज्ञानस्वरूप है ज्ञान गुण कहे परमात्मा का शेष है कर्मों के अनुकूल चौरासी लक्ष योनियों को भोगता है शरीर से भिन्न है प्रतिशरीर में भिन्न है जीव को किसी की उपमा नहीं दी जाती है ॥ १११ ॥

शरीर आत्मा नहीं इंद्रिय आत्मा नहीं मन बुद्धि चित्त अहंकार येभी आत्मा नहीं प्राण आत्मा नहीं ॥ ११२ ॥

पाञ्चभौतिक शरीरको ही कोई आत्मा मानते हैं सो नहीं शरीर तो इसी लोकमें नाश पाता है आत्मा कहीं भी नाश होनेवाला नहीं शरीर को अनेक रोग व्यापते हैं आत्मा को कोई रोग व्याप नहीं सक्ता है रोगी आदमी स्वप्न में सुख भोगता है तो आत्मा को ही सुख मालुम होताहै देह तो रोगी है ॥ ११३ ॥

कोई इंद्रियों को ही आत्मा मानते हैं, सो नहीं इंद्रिय नष्ट होते हैं आत्मा सदाकाल बना रहता है, वादी कहता है कि एक इंद्रिय नष्ट होजानेसे आत्मा नाश कैसा होजायगा हम तो सब इंद्रिय मिलकर आत्मा मानते हैं और कहते हैं कि घोडे की पूंछ काटनेसे घोडा नहीं मरता ऐसेही एक

इंद्रिय का नाश होनेसे नाश नहीं माना जाता है एक देशमें विकार रहो, अब सिद्धांती कहते हैं जो तुम सब इंद्रिय मिलके आत्मा मानोगे तो नेत्रसे जो वस्तु देखी जाती है उस वस्तुकी याद नेत्र नष्ट होगये पीछे न रहना चाहिये याद तो बनी रहती है ऐसी ही कानसे जो बात सुनी जाती है नाकसे जो चीज सूंघी जाती है ये सब वस्तु इन इंद्रियों का नाश हुये पीछे तुमारे कथन के अनुसार याद न रहना चाहिये परंतु याद तो रहती है अर्थात् इनका अनुभव बना रहता है ॥ ११४ ॥

नेत्र का नाश हुये पीछे भी देखा हुआ की याद रहती इसी तरह सब इंद्रियों के विषयों की उन इंद्रियों का नाश होनेपर भी अनुभवसे याद रही तो इंद्रियें ही आत्मा है कहना कहां रहा, इस से यह सिद्ध हुआ कि इंद्रिये आत्मा नहीं ॥ ११५॥

कोई कहें प्राण ही आत्मा है सो नहीं क्योंकि मेरा प्राण कहा जाता है तो मैं कहनेवाला और प्राण, यदि एक है तो मेरा कहना नहीं बनता मैं प्राण यों कहे तो कोई अर्थ निकलता नहीं इस से आत्मा प्राण से भिन्न है ॥ ११६ ॥

कोई मन को बुद्धि को आत्मा मानते हैं सो नहीं मेरा मन बिगडा है उस की बुद्धि अच्छी है मेरी बुद्धि मंद है यों कहना तबही बनेगा कि इन को और मेरा कहनेवाले को भिन्नमाना जायगा, ये सब प्रकृति है चौवीस तत्वों की है आत्मा इस से विलक्षणहै पच्चीसवा तत्वकह लाता है ज्ञानानंद गुणक है ज्ञानानंद गुणक क्या आनंदरूप जो ज्ञान है सो आत्मा में गुण है आत्मा गुणी है ज्ञान आत्मा का विशेषणहै आत्मा विशेष्य है ज्ञान दो प्रकार का है एक स्वरूपभूत ज्ञान है सो तो आत्मा का स्वरूप है दूसरा ज्ञान धर्मभूत ज्ञान है इस ज्ञान से आत्मा सब वस्तु ओं को देखता है जानता है अनुभव कर्त्ता है ॥ ११७॥

अब इस का खुलासा कहते हैं आत्मा आनंद-रूप कैसा है विषय की प्राप्ति से जो आनंद होता है सो आत्मा का ही स्वरूप है जैसे किसी रूप को देखकर अथवा शब्दको सुनकर आनंदहुआतो वह आनंद कुछ बाहरसे न आया किंतु आत्मा से ही प्रगट होगया जैसे पथरी में अग्निरहता है लोहाके घात से प्रगट होजाता है वैसे ही इंद्रियों के द्वारा आत्मा का आनंद रूप प्रगट होजाताहै ॥११८॥

कितने तो ब्रह्माने बाहर के शरीरमोंछिद्र कर दिये हैं उन छिद्रों से आत्मा बाहर का आनंद देखता है स्वरूपानंदको नहीदेखता है स्वरूपानंदको तो भीतरकीदृष्टि से देखना चाहिये कहतेहैं ॥ ११९ ॥

आत्मा नित्य है अनादि है स्वयंप्रकाशहै चैतन्यवान है अगुण है ज्ञाता है ज्ञानाश्रय है कर्त्ता है अचिंत्यहै अचिंत्य क्या संपूर्णवस्तुओं में विलक्षणहो के रहता है स्वाश्रय में ज्ञान कर के व्यापकहै स्वरूप कर के अणुहै आनंदमय है आनंदमय क्या जैसे चांदनी की रात और मलयाचल के पवन शांतरूप है वैसे अनुकूलता कर के प्रकाशमान है ऊर्मिषट्कसे रहित है ऊर्मिषट्क क्या भूखप्यास शोक मोह बुढापा मौत इन छेओं को ऊर्मिषट्क कहते हैं, ईश्वर के जीव नियाम्य है नियाम्य क्या परमेश्वर से प्रेरणा किया जाता है ईश्वर का अंशभूत है अंशभूत क्या भगवान् का प्रकार है भगवत् शरीरभूत है भगवत् शेष है शेष क्या चंदन पुष्प तांबूल के नाई परमेश्वर की जैसी प्रसन्नता होय वैसे इष्टानुसार विनियोग करने योग्य है ॥ १२० ॥

आत्मा चैतन्य युक्त ठहरा चंदन तांबूल ये तो जड ठहरे तो चेतन पदार्थ में जड पदार्थ का दृष्टांत देना किस निमित्त से है आत्मा जो है परमेश्वर का अत्यंत परतंत्र है इस अर्थ को सूचना करने के निमित्त है ॥ १२१ ॥

आत्मा निर्गुण है, निर्गुण क्या जो प्रकृति के सत्वादि गुण हैं तिन करके रहित है अच्छेद्य है कटने लायक नहीं अदाह्य है जलने लायक नहीं अशोष्य है सूखने लायक नहीं अगुणक्या द्रव्य है गुणी है गुण नाहि ॥ १२२ ॥

चेतन तीन प्रकार का है नित्य मुक्त बद्ध ये तीनो प्रत्येक अनंत है असंख्यात है कितने आचार्य आत्मा के पांच प्रकार कहते हैं उनके पक्षमें केवल और मुमुक्षु ये प्रकार अधिक हैं ॥ १२३ ॥

नित्य वे हैं जिनको प्रकृति के कर्म वासना रुचि येसे किसी कालमें संबंध नहीं है परम पदमें परमेश्वर की नित्य सेवामें रहते हैं जिनमें अनंत गरुड विष्वक्सेन ये मुख्य हैं ॥ १२४ ॥

मुक्त वे हैं परमेश्वर की कृपाकटाक्षसे जन्म के समय से सात्विकता प्राप्त हो के सत्संग पाय

के सद्गुरु के उपदेश से तत्वज्ञान प्राप्त हो के जो संसाररूपी बंधन से मुक्त हुए हैं सब देशमें सब कालमें सब अवस्थामें सब प्रकार से परमेश्वर की सेवा करते हैं ॥ १२५ ॥

बद्ध उनको कहते हैं कि जो अनादि कर्म वासना करके बँधे हैं जिस योनिमें पैदा होते हैं उसमें अहंकार करते हैं उसके संबंधियोंमें मम-कार करते हैं गर्भ जन्म बाल्य यौवन वार्धक मरण नरकरूपी सात अवस्थाओंको भोगते हैं नाशवान् पदार्थोंकी चाहना करते हैं प्रापंचिक सुखमें दिन दिन प्रीति बढाते हैं तुच्छ सुखोंके लिये यज्ञ दान तप व्रत इनको किया करते हैं ईश्वरकी प्रसन्नता के लिये आज्ञा मानके उनका नाममात्र भी नहीं लेते हैं देहाभिमानसे निज स्वरूप को भूले हैं ॥ १२६ ॥

केवल उनका नाम है कि जो पूर्व जन्मके सुकृत के अनुसार परमेश्वरकी कृपा से जिस वर्ण में जन्म लिया उस वर्णके धर्मकर्मोंको करके अंतःकरण निर्मल होके तत्वज्ञान से विदेह स्वरू-पको अनुभव करते हैं केवल स्वात्मानुभव करने वाले हैं ॥ १२७ ॥

मुमुक्षु नाम उसका है कि सांसारिक धर्मकर्मोंको दुःखरूप जानकर इस लोक और स्वर्गलोक के सुखोमें वैराग्य पैदा होके जो परमेश्वर की सदा काल सेवा करनी चाहते हैं ॥ १२८॥

बद्धोंका उद्धार कब होगा जब परमेश्वर का अनुग्रह होगा मुमुक्षु अवस्था प्राप्त होगी मुक्त होंगे जो संसार को कैद अपने को कैदी मानेंगे ॥ १२९ ॥

इस ब्रह्मांडमें ब्रह्मा से लेके चींटी पर्यंत जितने प्राणी हैं अपनी शक्ति से ब्रह्मांड के बाहर नहीं जा सक्ते हैं इसीके भीतर रुके पडे हैं इस से कैदी हैं इन कैदियों में छुटाई बडाई है कोई पृथिवीमें रहते हैं आकाश को नहीं जा सक्ते हैं कोई आकाशमें रहते हैं ब्रह्मलोक में नहीं जा सक्ते हैं ब्रह्मलोकमें रहनेवाले प्रकृति मंडल के बाहर नहीं जा सक्ते हैं ॥ १३० ॥

अब इन कैदियों को कौन छुटावै जिसने पैदा किया और कराया वह कौन है सर्वेश्वर है सर्वेश्वर कैसा है मायावी है माया क्या अघटित घटना सामर्थ्यवान है माया उसके स्वाधीन में है ॥ १३१ ॥

पुत्र उवाच–महाराज मायाका स्वरूप वर्णन करके मुझे कृतार्थ करो ॥ १३२ ॥

पितोवाच–अचेतन तीन प्रकारका है प्रकृति १ काल २ परमपद ३ प्रकृति दो प्रकारकी है एक स्वरूप नित्य एक परिणाम नित्य स्वरूप नित्य क्या सर्व कालमें एकरूप एकरस होकर बना रहनेवाला द्रव्य परिणाम नित्य क्या जैसे सुवर्ण से कडे कुंडल घडे कपडे आदिक नाम रूप हो जाते हैं परंतु अंतमें सुवर्ण होके बना रहता है प्रकृति को आविद्या अव्यक्त प्रधान माया भी कहते हैं मूलवस्तु को नहीं जानने देती है इस लिये आविद्या है चित्र विचित्र सृष्टि कर्ती है इस लिये माया है ॥ १३३ ॥

प्रकृति से तेईस तत्व पैदा हुए पहले महत्तत्व हुआ जैसे पृथिवी है उसको खोदकर एक पिंड बनाया तो उसका नाम क्या हुआ पिंड हुआ उसको दो कपाल बनाए तो उनका नाम कपाल हुआ उन दोनोंको जोड दिया तो क्या कहाया घट कहाया ऐसे ही परमात्मा के संकल्प और दृष्टि से महत्तत्व से अहंकार पैदा हुआ सो अहं-

कार तीन प्रकारका हुआ सात्विकाहंकार राजसा-हंकार और तामसाहंकार ॥ १३४ ॥

सात्विकाहंकारसे पंच ज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेंद्रिय मन ये ग्यारा उत्पन्न हुये कान त्वचा नेत्र जीभ नाक ये पांच ज्ञानेंद्रिय हैं वाक् हाथ पांव उपस्थ मलद्वार ये पांच कर्मेंद्रिय हैं ॥१३५ ॥

ताम साहंकार से तन्मात्र और महा भूत पैदा हुए शब्द स्पर्श रूप रस गंध इन पाचों को जो कारण भूत है उन को तन्मात्र कहते हैं आकाश वायु तेज जल पृथिवी ये पाचों महा भूत कहलाते हैं इनकी उत्पत्ति व क्रम अब कहते हैं ॥ १३६ ॥

तामसा हंकारमें प्रथम शब्द तन्मात्र हुआ उससे आकाश, आकाशमें शब्दगुण एक ही है आकाश से स्पर्श तन्मात्र हुआ स्पर्श तन्मात्र से वायु वायुमें अपना गुण स्पर्श आकाशका गुण शब्द यो दो हैं वायु से रूप तन्मात्र हुआ उससे अग्नि पैदा हुआ अग्निमें अपना गुण रूप वायु का गुण स्पर्श आशका गुण शब्द ये तीन हैं अग्नि से रस तन्मात्र हुआ रस तन्मात्र से जल उत्पन्न हुये जलमें अपना गुण रस अग्निका गुण रूप वायु का गुण स्पर्श आकाश का गुण शब्द

ये चार हैं जल से गंध तन्मात्र हुआ गंध तन्मात्र से पृथिवी हुई पृथिवीमें अपना गुण गंध जल का गुण रस अग्निका गुण रूप वायुका गुण स्पर्श आकाशका गुण शब्द ये पांच हैं ॥ १३७ ॥

तन्मात्रा अवस्था वह है जैसे दूधको जमाया तो दही होता है इन दोनोंको जो बीचकी अवस्था है अर्थात् दही। दुआ नहीं दूध रहा नहीं जैसे पुष्पोंमें गंध रहताहै वैसे महाभूतोंमें तन्मात्र रहते हैं ॥ १३८ ॥

राजसा हंकार जो है सात्विकाहंकार और तामसाहंकार इन दोनोंको बढाने वाला है अंतःकरण क्या शरीरके भीतरकी इंद्रिय को अंतःकरण कहते हैं उसके भेद चार हैं मन १ बुद्धि २ चित्त ३ अहंकार ४ संकल्प विकल्प जो उठे हैं मनसे उठे हैं निश्चय जो किया जाता है सो बुद्धि से किया जाता है चिंतन करना होता है तो चित्त से होता है जितना कुछ अभिमान है अहंकार से होता है ॥ १३९ ॥

मनुष्य देहमें वायु दश प्रकारका है जिससे सब कार्य किये जाते है प्राण अपान समान

उदान व्यान नाग कूर्म कूकर देवदत्त धनंजय ये दशप्राण कहलाते हैं प्राण वायु हृदय स्थानमें रहके भोजन का ग्रासको भीतर लेजाता है अपान वायु मलद्वारमें रहके मलमूत्रोंको बाहर छोड देता है समान वायु नाभिस्थानमें रहकर अन्नको पाचन करता है उदान वायु कंठस्थानमें रहकर बोलनेका कार्य करता है व्यान वायु सब शरीरमें रहकर पलक मुंदनेका कार्य करता है नागवायुसे हुचकी आती है कूर्मवायुसे नेत्र खुलते हैं कूकर वायु से छींक आती है देवदत्त वायुसे जमुहाई आती है धनंजय वायु जो है प्राणोंके निकल जानेके पीछे भी शरीरमें बना रहता है जिससे शरीर फूल जाता है॥ ॥ १४० ॥

अब दश इंद्रियोंके अधिष्ठान देवता ओंको कहते हैं नेत्रोंका अधिष्ठान देवता सूर्य है नासिका का अधिष्ठान देवता अश्वनीकुमार है कानोंका अधिष्ठान देवता, दिक्पाल है जिह्वाका अधिष्ठान देवता वरुण है त्वचाका अधिष्ठान देवता पवन है वाणीका अधिष्ठान देवता अग्नि है हाथों का अधि-

ष्ठान देवता इंद्र है पावोंका अधिष्ठान देवता विष्णु है उपस्थ का अधिष्ठान देवता ब्रह्मा गुदस्थान का अधिष्ठान देवता यमराज है ॥ १४१ ॥

भीतरकीं जो चार इंद्रियें है उन मे मनका अधिदेवता प्रद्युम्न है चित्तका अधि देवता बासुदेव है बुद्धिका अधि देवता आनिरुद्ध है अहंकारका अधिदेवता संकर्षण है, चंद्र का अधिष्ठान मनहै जीव का अधिष्ठान चित्त है ब्रह्माका अधिष्ठान बुद्धि है रुद्र का अधिष्ठान अहंकार है ॥ १४२ ॥

इंद्रियों मे तीन चीजरहती हैं अध्यात्म, अधिभूत, अधिदेव, अध्यात्म क्या है जैसे नेत्रोंमें गोलक; अधिभूत क्या जैसे देखनेवाली इंद्रिय, अधिदेव क्या जैसे प्रकाश करनेवाला सूर्य इसीतरे सब इंद्रियों मे तीन बात रहती हैं ॥ १४३ ॥

प्रकृति महत्तत्व अहंकार आकाश वायु अग्नि जल पृथिवी इनआठ तत्वोंसे शरीर उत्पन्न होताहै पंचज्ञानेंद्रिय पंचकर्मेंद्रिय और मनयेग्या रह प्रतिशरीर में भिन्न हैं जैसे जेवर मे नगीने जडेहुए होते हैं प्रकृति मंडल के हद्दपर पंहुचते पर्य्यंत शरीर के साथ रहती है ॥ १४४ ॥

पुत्रउवाच। महाराज पंचीकरण क्या होता है कहिये ॥ १४५ ॥

पितोवाच। एकतत्व मे पांचतत्वों का होना वा- मिलाना पचीकरण कहलाता है जैसे आधासेर जल मे आधपावबूरा, आधापाव केसर, आधपाव कपूर आधपावचंदन इन को मिलाने से सेर भर जलकह लाता है ऐसे ही पृथिवी मे जलअग्नि वायु आकाश येचारों आठवें हिस्से से हैं इन सब के बराबर पृथि वीका हिसा है परंतु उस को पृथिवी कहते हैं कार ण पृथिवी का हिस्सा अधिक है इस लिये इसीप्रका रसे पंचभूतों का पंचीकरण है जिसतत्व का हिस्सा अधिक मिला है उस का नाम उस तत्व का लिया गया है देवमनुष्य जलचर खेचरों के शरीरों मे इन तत्वों का न्यूनाधिक भाव होकर व्यवहार उन तत्वों के नाम से होता है जैसे मनुष्य पशु इन के शरीर पार्थिव कहलाते है, देवगंधर्व इन के शरीर तैजस कहलाते है, भूतप्रेतयक्षादियों के शरीर वायु शरीर कहलाते हैं, जलचारों के शरीर अम्मय अ- र्थात् जल शरीर हैं इन सब के संगमे परमेश्वर भी वेदों मे आकाश शरीर कहलाते हैं महत्तत्व अहं-

कार इन दोनों को इसी तरे मिलाने से पंचीकरण का सत्ती करण हो जाता है ॥ १४६ ॥

वेंदों मे त्रिवृत् करण भी है त्रिवृत्करण क्या एक गुणमे तीनो गुणों का मेल है सत्वगुणका आधाहिस्सा और आधे मे रजोगुण तमोगुण बराबर मिलकर सत्वगुण कहलाता है परंतु इस का नाम मिश्रसत्व है मिश्रसत्व क्या जिस मे और गुणों का मेल है उस सत्वणगुको मिश्र सत्व कहते हैं ब्रह्मांडभर मे जो सत्व गुण है रजो गुणतमो गुणों से मिलाहुआ है शुद्धसत्व जो है परम पद मे हैं रजो गुणमे आधा हिस्सा रजोगुण का और आधे मे सत्व गुणतमो गुणोंका हिस्सा बराबर है मिलकर रजोगुण कहलाता है तमोगुण काभी इसी प्रकारसे जान लेना इसका नामात्रि बृत्करणहैं इस प्रकार से प्रकृति पदार्थका संक्षेप वर्णन किया गया॥१४७॥

अव कालका वर्ण है कालजो है भूत, भविष्यत, वर्तमान ऐसे तीन प्रकारका है भूत उसे कहें कि जो गुजरगया, भविष्यत वह है जो गुजरेगा, वर्तमान उसका नाम है जो गुजर रहा है काल के और दो भेद है एक खंडकाल एक अखंड काल खंडकाल क्या जिस की संख्या होय है जैसे पल, घडि, प्रहर,

दिन, पक्षमास, ऋतु, अयन, संवत्सर इत्यादि, अखंड काल क्या जिसकी संख्या न होसके सो अखंड काल वैकुंठ में रहता है ॥ १४८ ॥

परमपदमें अचेतन दो तरहका है एक धर्म भूतज्ञान दूसरा शुद्ध सत्व, धर्म भूतज्ञान जो है चेतनमें विशेषण होयकर रहता है, शुद्ध सत्व त्रिगुणसत्व से विलक्षण है स्वयंप्रकाश है अजड है परस्मै स्वयंप्रकाश है स्वस्मै स्वयंप्रकाश नहीं स्वस्मै स्वयंप्रकाश क्या अपने को आप नहीं प्रकाश होता है अर्थात् औरोंको आप प्रकाश होता है और कैसा वह तत्व है जिसको आवरण नहीं जैसे शुद्ध काँचमें दीपक का प्रकाश नहीं ढक-सक्ता है ऐसे ही इस तत्वमें चेतनका प्रकाश नहीं ढक सक्ता है यह तत्व अप्राकृत है वैकुंठमें सब शरीर इसी तत्वके हैं वहां के चेतन संकल्प मात्रसे शरीरोंको धारण करते हैं ईश्वरकी इच्छा के अनु-सार होजाते हैं ॥ १४९ ॥

अब ईश्वरका निरूपण करते हैं सर्व ईश्वरोंका ईश्वर सब देवताओंका देवता जो है उसका नाम ईश्वर है वो दोनों विभूतियों का मालक है चेतन

अचेतन ये दोनों ईश्वरके स्वाधीन हैं और कैसा ईश्वर है एक ही समय चलता भी है नहीं भी चलता. एक ही समय सोता भी जागता भी है एक ही समय कार्य करता भी है नहीं भी करता, कोई इंद्रिय बिनाही सब इंद्रियोंका कार्य कर सक्ता है छोटे से छोटा और बडे से बडा है छोटा ऐसा है कि सब से छोटा जो परमाणु है उस के भीतरभी रहता है बडा ऐसा है कि अनंत कोटि ब्रह्मांड उन के एक देशमें हैं ईश्वर तो सर्व देशमें है सर्व कालमें है सब वस्तुमें है विभु है विभु क्या भीतर बाहर सर्वत्र व्यापक है विभुत्व तीन प्रकारका है एक स्वरूप से विभु, दूसरा धर्म भूत ज्ञान से विभु, तीसरा विग्रह से विभु ॥ १९० ॥

और सत् चित् आनंद स्वरूप है अमल स्वरूप है अनंत स्वरूप है और जगत का उपादान कारण निमित्त कारण सहकारि कारण है उपादान क्या जिस वस्तु के कार्य के अंदर रहनेसे कार्य उत्पन्न होता है सो उपादान कारण है जैसे मट्टुका बननेमें मट्टी, निमित्त कारण क्या जैसे मट्टुका को बनानेमें कुंम्हार, सहकारि कारण क्या जैसे चाक डंडा और स्मृति व्यापार इत्यादिक १९१

अब और खुलासा करके कहते हैं प्रकृति के अंतर्यामी परमेश्वर ही उपादान कारण है ब्रह्मादि देवताओंके अंतर्यामी संकल्पाश्रय परमेश्वर ही निमित्तकारण है कालके अंतर्यामी परमेश्वर ही सहकारि कारण है अर्थात् चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म एक ही उपादान निमित्त सहकारि है सृष्टिकर्त्ता पालनकर्ता संहारकर्ता वही है प्रलय के समय उसी परमेश्वर में सब जगत लीन होकर रहता है परमेश्वर जो है पूर्ण पुरुषोत्तम है जहां चाहे तहा संकल्प करके अपना ऐश्वर्य प्रगट कर देता है ॥ १८२ ॥

परमेश्वर का स्वरूप पांच प्रकारका है पर १ व्यूह २ विभव ३ अंतर्यामी ४ अर्चा ५ जो स्वरूप परम कारण श्रीवैकुंठमें प्रगट है उसका नाम पर है सृष्टि स्थिति संहार करने के इच्छा से क्षीर सागरमें जो स्वरूप प्रगट होय है उसका नाम व्यूह है व्यूह चार प्रकारका है वासुदेव १ प्रद्युम्न २ अनिरुद्ध ३ संकर्षण ४ इन चारोंका नाम व्यूह है मत्स्य कूर्मादि दसों अवतार विभव कहलाते हैं विभव स्वरूप अनंत है सर्व व्यापक सर्व नियंता

सर्व धारक सर्व शेषी सर्व भोक्ता होके सब शरीरोंमें अंतरात्मा होके रहनेवाला जो परमेश्वरका स्वरूप है सो अंतर्यामी है और शालग्राम मूर्ति बालमुकुंदकी मूर्ति श्री सीतारामजीकी मूर्ति राधाकृष्णजीकी मूर्ति श्रीरंगनाथजी श्रीवेंकटेश जी श्री संपत्कुमार नारायण इत्यादि इन को अर्चा स्वरूप कहते हैं अर्चा क्या भक्तोंके रुचिके अनुसार सेवा ग्रहण करने के निमित्त अपनी और भक्तोंकी इच्छा से प्रगट किये हुए विग्रह हैं. अंतर्यामी क्या स्वर्ग अथवा नरकमें रहते समय भी जीवात्मा को सुहृद् होके जीवके साथ रहकर उसके दोषोंके स्पर्श विना योगियोंके देखने योग्य हृदयमें रहनेवाला विग्रह है विभव क्या समय समयपर अपने अप्राकृत गुण रूपोंको देव मनुष्य वनचर जलचरोंमें दिखा देनेके विग्रह है व्यूह क्या सृष्टि पालन संहार के समय योगिजनोंके अनुभवमें आनेवाले गुणप्रधान विग्रह है पर क्या श्रीभूनीला समेत पीतांबरधर शंख चक्र गदाऽभयहस्त निर्विकार अप्राकृत दिव्य मंगल विग्रह है ॥ १८३ ॥

परमात्माके सब स्वरूपोंमें अर्चा स्वरूप सब कालमें सब को दर्शन करने योग्य है इससे सब

अवतारोंको अर्चामूर्तिमें याद कर सक्ते हैं अवतारोंके गुण रूप शील स्मरण करें तो अर्चाविग्रहमें करें जिससे लक्ष्य ठहरे विश्वास जमें परात्परके जो रूप गुणशील अर्चा विग्रहमें याद करेगा सो रूप गुणशील प्रगट हो जायगा क्योंकि जहां जैसा भाव तहां वैसा देव ॥ १५४ ॥

अथवा सद्गुरु मूर्तिमें परमात्मा की भावना करे गुरु शरीरी परमात्मा की जो उपासना है अर्चा मूर्तिकी उपासना से सुलभ है क्योंकि चेतन शरीरी की उपासना है प्रसन्नता अप्रसन्नता प्रगट मालूम होसक्ती है गुरुके विग्रहमें परमेश्वरके शील रूप गुण याद करे तो तत्काल प्रगट हो जायगे सद्गुरु मुर्त्तिसे सब मनोरथ मिलेंगे ॥ १५५ ॥

अथवा पिता शरीरि परमात्मा की उपासना करे तो बनसक्ता है यद्वापतिशरीर में परमात्मा की भावना कर के उपासनाकरे तो होसक्ती है पतिको ईश्वरमानकर जो गुणयाद करे सो गुण प्रगटहो जायगा ॥ १५६ ॥

अथवा अपने में परमेश्वर को भावना करे तो करसक्ता है परमेश्वर का जो गुण जो रूप जो

शील है अपने में स्मरण करनेसे प्रगट होजायंगे जिस गुण को प्रगट किया चाहे उसगुण को विशेष कर के यादकरें जितनी सिद्धियां हैं इसी स्मरण भावना उपासना से प्राप्तहोती हैं ॥ १८७ ॥

पुत्रउवाच—महाराज किसी को देवताओं के ऐश्वर्य की चाहना होय तो कैसे उपासनाकरें १८८

पितोवाच—कहते हैं सुनो अंतरक्षिविद्या अंतरादित्य विद्या दहर विद्या भूम विद्या सद्विद्या मधुविद्या उपकोशलविद्या शांडिल्य विद्या पुरुषविद्या प्रतर्दनविद्या वैश्वानर विद्या पंचाग्निविद्यन्पासविद्या इत्यादि ब्रह्म विद्या देवताओं के ऐश्वर्य को प्राप्त करने के लिये बहुत विद्या है उनमें से एक अंतरादित्य विद्या कहते हैं सुनो—सूर्य के ऐश्वर्य की चाहना होय तो अपने अंतर्यामी सूर्य्य के अंतर्यामी और ईश्वर इन तीनों को एकभावनाकर यादकरें सूर्य के आत्मा को सूर्यके ऐश्वर्य को भी याद करें जिसईश्वरने सूर्य के ऐश्वर्य प्रगट किया है सो हमाराभी अंतर्यामी है हममेंभी ऐश्वर्य प्रकट करदेगा ऐसे तीनों प्रकारों को सदा काल यादकरने से मन की वृत्ति तदाकार होकर उपासना पूर्ण होजायगी तो सूर्य के ऐश्वर्य की

प्राप्ति होके सिद्धमनोरथ होजायगा अंतमें भावना की उन्नति होने से परमात्माकी प्राप्ति होजायगी उपासना का मार्ग गूढ है गुरुमुख से जानने योग्य है॥ १५९॥

अब परमेश्वर के अवतारों की उपासना का प्रकार कहते हैं चाहे जिस अवतार की उपासना करे उस अवतार की श्रीमूर्ति में परव्यूहादि स्वरूपोंके रूपगुण विभूतियों को यादकरें परमात्मा के अवतार सब संसार के मित्र हैं मित्र कियाचाहे तो परमेश्वर के अवतारों को मित्र करें क्योंकि सदा काल मित्रता बनीरहेगी सब के भीतर की प्रीति को जाननेवाले हैं सदाकाल पासरहसक्ते हैं जैसे रूप में देखनेचाहे वैसे रूप को कर सक्ते हैं उन के रूप में कोई विघ्न नहीं करसक्ता है संसार के सब दुःख को दूरकरने वाले और सबसुख को देनेवालेहैं अपने संबंधों को अवतारों में याद करे॥ १६०॥

पुत्रउवाच—महाराज परमेश्वर को अवतार लेने का क्याप्रयोजन है मत्स्य कूर्मादिक अवतार होने का क्या कारण है कहिये॥ १६१॥

पितोवाच—जिससमय जगत् में धर्म का लोप होजाता है अधर्म का विस्तार होने लगता है,

उस समय ब्रह्मादि देवता सब मिलकर प्रार्थना करते हैं कि हेजगदीश जगत् की रक्षा के लिये अब प्रगट होओ, तब अधर्म को लोपकर के धर्म को बढानेके लिये परमेश्वर अवतार धारणकर्ते हैं १६२

और कहते हैं सुनो वेद आनादि है अपौरुषेय है अपौरुषेय क्या किसी पुरुषका बनायाहुआ नहीं वेदको जाननेवाले ऋषिगण तो वेदों को परमेश्वर की वाणी बताते हैं स्वयं वेद का कथन है कि वेद परमेश्वरका निश्वास है उन वेदों में परमेश्वर के अवतारों का वर्णन विस्तारपूर्वक है, सो उस को सत्यकरने के वास्ते परमेश्वर अनेक अवतार धारण करते हैं ॥ १६३ ॥

और कितने नारायण के अनन्य भक्त,प्रेमी,निरंतर ध्यान कर के परमेश्वर के जगन्मय दिव्यमंगल विग्रह को दर्शन करते हैं तो मोहित होजाते हैं मांस चक्षुओं से भी देखने को चाहते हैं क्योंकि प्रत्यक्ष देखे विना उन से नहींरहा जाता है एक एक पलक को कल्प के समान व्यतीतकरते हैं उन के ऊपर कृपाकर परमेश्वर अवतार धारण करते हैं॥१६४॥

और सुनो अपनी सर्वव्यापकता को सिद्धकरने के निमित्त अवतार धारणकरते हैं अवतार धारण

करना क्या परमेश्वर अपने स्वरूप रूपगुण विभूति योंको अज्ञानी संसार को प्रगट कर के दिखलाते हैं ज्ञानियों के भ्रम को निवारण करते है अवतारों का मुख्यप्रयोजन इच्छा है, जैसे—मत्स्यावतार धारण किया तो वेदापहारि असुरका संहार कर के वेदों को प्रलयकाल में बचाकर ब्रह्माजी को देके रक्षा करी, कूर्मावतार धारण किया तो मंदर पर्वत को समुद्र में धारणकर के जगदुद्धारक मैंहूं यह दिखाया अजरामरकरने वाले अमृत को पैदा करने में देवताओं को सहाय किया, वराहअवतार धारण किया तो पृथिवी को उठा कर अपनी शक्ति से जलपर थाम रक्खी और संसार को बढा दिया ॥ १६८ ॥

और श्रीनृसिंहजी का अवतार धारण किया तव ऐसा किया कि, परम भक्त प्रल्हाद के वचन के साथ ही हिरण्यकशीपु दैत्य की सभास्तंभ में से प्रगट होके अपनी सर्व व्यापकता भक्तवात्सल्य और अपना अप्राकृत दिव्य विग्रहका होना प्रत्यक्ष करके दिखाया हिरण्यकशिपुने अपने विषय में कितनाही अपराध किया तो सहन किया अपना भक्त प्रल्हाद को दुःख दिया तो सहन नहीं कर सका

उस समय ब्रह्मादि देवता सब मिलकर प्रार्थना करते हैं कि हे जगदीश जगत् की रक्षा के लिये अब प्रगट होओ, तब अधर्म को लोपकर के धर्म को बढानेके लिये परमेश्वर अवतार धारणकर्ते हैं १६२

और कहते हैं सुनो वेद आनादि है अपौरुषेय है अपौरुषेय क्या किसी पुरुषका बनायाहुआ नहीं वेदको जाननेवाले ऋषिगण तो वेदों को परमेश्वर की वाणी बताते हैं स्वयं वेद का कथन है कि वेद परमेश्वरका निश्वास है उन वेदों में परमेश्वर के अवतारों का वर्णन विस्तारपूर्वक है, सो उस को सत्यकरने के वास्ते परमेश्वर अनेक अवतार धारण करते हैं ॥ १६३ ॥

और कितने नारायण के अनन्य भक्त,प्रेमी,निरंतर ध्यान कर के परमेश्वर के जगन्मय दिव्यमंगल विग्रह को दर्शन करते हैं तो मोहित होजाते हैं मांस चक्षुओं से भी देखने को चाहते हैं क्योंकि प्रत्यक्ष देखे विना उन से नहींरहा जाता है एक एक पलक को कल्प के समान व्यतीतकरते हैं उन के ऊपर कृपाकर परमेश्वर अवतार धारण करते हैं॥१६४॥

और सुनो अपनी सर्वव्यापकता को सिद्धकरने के निमित्त अवतार धारणकरते हैं अवतार धारण

करना क्या परमेश्वर अपने स्वरूप रूपगुण विभूतियोंको अज्ञानी संसार को प्रगट कर के दिखलाते हैं ज्ञानियों के भ्रम को निवारण करते है अवतारों का मुख्यप्रयोजन इच्छा है, जैसे—मत्स्यावतार धारण किया तो वेदापहारि असुरका संहार कर के वेदों को प्रलयकाल में बचाकर ब्रह्माजी को देके रक्षा करी, कूर्मावतार धारण किया तो मंदर पर्वत को समुद्र में धारणकर के जगदुद्धारक मैंईहूं यह दिखाया अजरामरकरने वाले अमृत को पैदा करने में देवताओं को सहाय किया, वराहअवतार धारण किया तो पृथिवी को उठा कर अपनी शक्ति से जलपर थाम रक्खी और संसार को बढा दिया ॥ १६८ ॥

और श्रीनृसिंहजी का अवतार धारण किया तब ऐसा किया कि, परम भक्त प्रल्हाद के वचन के साथ ही हिरण्यकशीपु दैत्य की सभास्तंभ में से प्रगट होके अपनी सर्व व्यापकता भक्तवात्सल्य और अपना अप्राकृत दिव्य विग्रहका होना प्रत्यक्ष करके दिखाया हिरण्यकाशिपुने अपने विषय में कितनाही अपराध किया तो सहन किया अपना भक्त प्रल्हाद को दुःख दिया तो सहन नहीं कर सका

तत्काल खंभ फाडकर निकला हिरण्यकशिपु को मारा फिर प्रल्हाद ने दीन होके प्रार्थना करी तो अपराधों की क्षमा करी उसी हिरण्यकशिपु को मोक्ष दिया ॥ १६६ ॥

वामनावतार धारण किया तो बलिराजा से तीन पांव पृथ्वी के बहाने से बली के समेत तीनों लोकोंको अपने चरण का स्पर्श करा के उन की अधर्म वासना दूर करी ॥ १६७ ॥

परशुरामावतार धारण किया तो आवेश की शक्ति कर के दुष्ट राजाओं को दमन किया ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मणों को मान दिया ॥ १६८ ॥

सकल जगदभिराम सत्य काम श्रीरामचन्द्रजी महाराज ने अवतार धारण किया तो वध के योग्य अपराध किये काकासुर को शरणागत होनेपर ब्रह्मास्त्र से रक्षा करी रावण से धर्म युद्धकर पक्षि जटायु को साक्षात् मोक्ष दिया जानकीजी का अपहार कर अपराधि बनकर रावण सामना कर के युद्ध में जब मूर्च्छित हुआ तब यह नहीं विचारा कि इस का वध करने का यही समय है देखकर और कहा हे राक्षसराज आज हमने तुमको छोड दिया है घर को जाओ विश्राम करो थके हो कल

तयार होके फिर आना हमारा पराक्रम तुम को और दिखायँगे ऐसा क्यों कहा दुष्ट की बुद्धि समय पाय के बदल जाय तो अच्छी बात है इस वास्ते सो दुष्ट रावण फिर भी युद्ध कहने को जब आया तब निराश होके आखिर को एक एक शिर तोडा सब शिर एक बार में नहीं तोडे क्यों कदाचित् अब शरणागत होजायगा तो रक्षा करनी पडेगी। इस से अपना आश्रित सौकर्याऽपादक गुण प्रगट किया आश्रित सौकर्याऽपादक गुण क्या जिस गुण का अनुभव करने में भक्त जनों को अपने अपराधों को देखकर परमेश्वर से दूर रहना न पडे शरणागत होने की चाहना पैदा होजाय उस को आश्रित सौकर्या पादक गुण कहते हैं ॥ १६९ ॥

कोई कहते हैं कि, एकवार में रामचन्द्रजी रावण के सब शिर नहीं तोडसके एक एक शिर तोडा सो बात नहीं क्योंकि सुग्रीव के विश्वास के लिये एक बाण से एक काल में सात शालवृक्षों के तमाम पत्ते जिन्हों ने गिराए हैं उन को रावण के दस शिर तोडना क्या भारी काम था केवल अपना करुणागुण दर्शाया है ॥ १७० ॥

पुत्रउवाच—महाराज आपकहते तो हैं करुणा गुण दिखाया परंतु वालीतोशत्रुनथा विदूनअपराध

उस को मारा जिस के पराक्रम से स्वयं रावण रात दिन डरताथा सामनेहोकर भी नहीं मारा छिपकर मारा है इस में क्या करुणागुण देखपडा कौनसा पराक्रम हुआ ॥ १७१ ॥

पितोवाच-जिससमयमें सुग्रीव जीने शरणागति कर के अपना दुःख सुनाया कि वाली मेरे ऐश्वर्य स्त्रीसमेत लेकर मेरे को अनाथकर दिया है अब मैं आपसे सनाथ हूं उससमय में वाली भक्त का अपराधीजानागया वालीशाखामृगथा इसलिये सिकारी की मर्यादा से मारा शत्रुभावसे नहीं मारा, दुष्ट मृगों को मारना राजाओं का धर्म है रघुवंश में अवतार लिये वीरपुरुषों को बानरों से सामना करना पराक्रम नहीं कहलाता है इसलिये सामना नहींकिया रघुनाथजी को किसी से शत्रुभाव है नहीं आखिर को अपने भाई के लिये सुग्रीव रोया तो आप भी रोये यह करुणा गुण नहीं तो क्या है ॥ १७२ ॥

वादीकहता है कि रामचंद्र तो मनुष्यथे परमेश्वरनथे क्योंकि जानकी जीको रावण लेगया तो जंगल में रोते फिरे ढूंढकर पता न पाया तब वानरों का आसरा लिया परमेश्वर होते तो क्यों रोते क्यों ढूंढते क्यों पशुजातिका आसरालेते ॥ १७३ ॥

अब सिद्धांत कहते हैं एकसमय ब्रह्माजीके पुत्र सनकादिक श्रीवैकुंठ गये उससमय परमेश्वर अंतःपुरमें थे द्वारपालोंने उनको वहां जाने नादिया तब वे कोपातुर होकर ऐसा शापादिया कि "तुमको केवल भेद बुद्धि है इसलिये यहां रहने योग्य नहीं हो अधोलोक में जाओ और असुर राक्षस मनुष्ययोनियों में जन्मलेओ भेदभाव करनेका फल पाओगे" तब द्वारपालोंने उनको मनाय क्षमा मांगी तब ऋषियोंने कहा सातजन्मके पीछे वैकुंठ आने पाओगे अथवा परमेश्वरसे घोर वैरकरना अंगीकार होय तो तीनजन्मके अंतमें पूर्ववत् होजाओगे इस बातको परमेश्वरनेभी अंगीकार किया तब द्वारपाल भूलोकमें दूसरी बार राक्षस योनिमें जन्म ले रावण कुंभकर्ण कहलाए जब ब्रह्माजीकी कठिन तपस्याकी, तब ब्रह्माजी प्रत्यक्ष हुये तो बर मांगा कि सिवाय मनुष्यके हमारी मौत और किसीके हाथसे नहो ब्रह्माजी बोले ऐसाही होजायगा तब परमेश्वरी परमेश्वर जो लक्ष्मीनारायण हैं वे मर्त्यलोकमें अवतार मनुष्याकारसे सीता रामचंद्र महाराज हुए कैकेयीको दशरथका वर देना, मंथराके उपदेशसे कैकेयीका वर मांगना, जंगलमें संग चलनेको जानकीजीका

हठ करना, माया मृगकी चाहना करना ये सब काम केवल द्वारपालोंको शापसे मुक्त करनेके निमित्त परमेश्वरके सत्यसंकल्पसे हुए रावणके वधके उपयोगी मनुष्यभाव सिद्ध करनेके लिये परमेश्वरने यदि शोच खोज इत्यादि किया तो क्यादूषण हुआ, रामचंद्रजी परमेश्वर नथे यह कथन तो अज्ञानीका है जैसे घूवू सूर्यके प्रकाशको नहीं देखसक्ताहै. तो कहता है. सूर्य कोई वस्तुनहीहै जिनने चरण स्पर्शमात्रसे अहल्याको पत्थरके रूपसे छुडाकर दिव्य रूप प्राप्त कर दिया समुद्रका राजा वरुण जिनके सामने अपराधीकी नाई खडा होकर क्षमा मांगी स्तुति करी लंकाकेजानेको मार्ग दिया. और जिनने रावणके वध करनेके समुद्रके पारहोनेके राक्षस और वानरोंके बलाबल देखनेके पहिलेही विभीषणको लंकाका राज्य देदिया. वे श्रीरामचंद्रजी महाराज परमेश्वर नहींतो कौनथे, तुम मनुष्यभाव दिखानेकी बातें कहकर मनुष्य कहते हो तो परमेश्वर भावको प्रगट करनेकी इन बातोंको सुनकर श्रीरामचंद्रजीको परमेश्वर कहो, श्रीरामचंद्रजी महाराजने रावणके वधके लिये मनु-

ष्यभाव दिखायाहै और भक्तजनोंको अपनी उपासना करनेके लिये परमेश्वर भाव दिखायाहै १७४

और कहतेहैं सुनो ब्रह्मेंद्रादि देवताओंने विष्णु भगवान्से प्रार्थना किया कि हे परमेश्वर आपके द्वारपाल राक्षस योनिमें जन्मलेंगे तो जगत्को बहुत दुःखदेंगे सो आपको अवतार लेना पडेगा क्योंकि वे औरोंसे नही हटाये जायगे तब विष्णुभगवान्ने कहा पहिले तुमलोग वानरों की योनि में जन्मलेओ, समयपर हम मनुष्य रूप धारण करेंगे उस समय तुमलोग सहाय करोगे सो देवता लोग वानर होकर पैदाहुयेथे इसलिये श्रीरामचंद्रमहाराज ने उन का आसरा लिया ॥ १७५ ॥

और बलरामावतार धारण किया तो दुष्टप्रलंबादियों को मथन किया ॥ १७६ ॥

साक्षात्परब्रह्म श्रीकृष्णचंद्र महाराज का अवतार धारण किया तो चरमोपाय बतायकर अर्जुन को कृतार्थ किया १७७ ॥

कल्कि का अवतार धारण किया तो कलि के अधार्मियों को दूर करके पूर्ण धर्म को जगत् में चलाया और आगे चलायेंगे ॥ १७८ ॥

पुत्र उवाच—महाराज आपने कहा कि पूर्ण धर्म

चलाया तो फिर श्रीकृष्णचंद्र महाराज ने रासक्रीडा क्यों करी ॥ १७९ ॥

पितोवाच-इस का उतर देते हैं सुनो. शुंभनिशुंभ दैत्यों ने देवीजीसे कहा कि तुम हमारी भार्या हो जाओ देवीजी ने कहा मेरे बराबर जिस में जोरहोय मेरे दर्प को दूर करै मुझे संग्राम में जीते सो मेरा पति होगा. सो यहां देवीजी लीलादेवी होके अपनी करोडों शक्तियों को गोपस्त्रियों के रूप से प्रगट कर के श्रीकृष्णचंद्र महाराज से युद्धके लिये उद्युक्त हुई परंतु श्रीकृष्णचंद्र महाराज को नहीं जीतसकीं हारगई श्रीकृष्णचंद्र महाराजने सब को च्युत करदिया अपने चरणों में डाल लिया अच्युत को कौन च्युत करसक्ता है सो पराशक्ति मेरी है यह बात रासक्रीडा से श्रीकृष्ण महाराज ने दिखाई जिस की पराशक्ति है सो परदेवता है ॥ १८० ॥

दूसरा अर्थ और कहते हैं सुनो—श्रीकृष्णमहाराज ने रासक्रीडा करके काम विजय किया. कामविजय क्या. इन्द्र ने नरनारायण के जीतने को बदरीवन में कामदेवको भेजा तब कामदेव जाकर नरनारायण के ऊपर अपना सब पराक्रम प्रगट किया सब सेना को भेजकर सामर्थ्य दिखाया परंतु

कुछ नहीं हुआ और जीतनहींसका तब नरनारायण भगवान् ने अपने मनमें प्रसन्नता मानी और अपनी जाँघसे अति रूपवती दस अप्सरायें उत्पन्न कर के कहा कि हेकाम तुम मेरे आश्रम में आयेहो तो आश्रम को शून्य मत करो इन अप्सराओं मेंसे एक को जो तुम्हारे मन भावे लेजाओ और अपने राजा को भेंट करो.तब कामदेव लज्जित हुआ उर्वशी नाम वाली अप्सरा को लेके जाते समय अपने मन में कामदेवने यह कहा कि नरनारायण भगवान् वृद्धथे इस से मेरा पराक्रम इनपर न चलसका इस बात को नरनारायण परमात्मा जान गये और निश्चय किया हम किशोर अवस्था को धारण करेंगे सब सेनाके सहित कामदेव को जीतेंगे सो परमेश्वर नरनारायण ने श्रीकृष्णचंद्र महाराजका रूप धारण करके कामदेव को जीता है॥ १८१॥

अब और कहते हैं सुनो जितना प्रकृति का विस्तार प्रगट दिखाई देता है सब लक्ष्मी जीका स्वरूप है और जितना चैतन्य का प्रकाश है सो सच्चिदानंदमय नारायण का स्वरूप है लक्ष्मी और नारायण का सब स्थानमें विहार है सो लक्ष्मी जी गोपी हैं नारायण साक्षात् श्रीकृष्णचंद्रमहाराज हैं

गीता में कहा है वेदके आदि में और अंत में जो अक्षर है उसके आदि में जो अक्षर है सो परमेश्वर का वाचक है परमेश्वर श्रीकृष्ण चंद्रमहाराज हैं महेश्वर परमेश्वर शब्द श्रीकृष्ण चंद्र श्रीरामचंद्र के ही मुख्यवृत्ति कर के वाचक होसक्ते हैं ॥ १८२ ॥

कोई कहते हैं कि श्रीरामचंद्र श्रीकृष्णचंद्र ब्रह्मनहीं हैं इन्हों ने बड़े बड़े काम किये हैं इसलिये श्लाघाकी रीतिसे "अर्थात् तारीफके तौर" ब्रह्मकहते हैं अब इसका उत्तर देतेहैं सुनो—बड़े बड़े काम कर ने में ब्रह्म कहते तो क्या अगस्त्यजीको ब्रह्म न कहते, जिस ने सारेसमुद्र को एक बेर में आचमन करलियाथा, श्रीरामचंद्रने तो पुल बांधाथा सहस्र बाहु अर्जुन तो रावण को बांधकर लेगयाथा पुल-स्त्यजीने छुडाया उस सहस्रबाहु अर्जुन को पर-शुरामजीने वध किया उस परशुरामजीको भी एक पक्षमें ब्रह्मनहीं कहते, राजा जह्नुने गंगाजी को शेष न छोडा पानाकियाथा पर उस को भी ब्रह्म नहीं कहते हैं राजाप्रियव्रतने अपने रथ के चक्रसे सात समुद्र बनाये उस को भी ब्रह्मनहीं कहते हैं हनुमान जीने द्रोणा चल उठालाया उन को

भी ब्रह्म नहीं कहते हैं श्रीकृष्णचंद्रने जो गोवर्धन उठाया है सो द्रोणाचल नाम पर्वत का एक ढूंगा है उस के उठा ने से ब्रह्म कैसे कहते हैं ॥ १८२ ॥

ब्रह्म किसको कहते हैं जो सर्व शक्तिमान् होय चाहे जहाँ अपनी शक्ति को फैलायदे चाहे जब खींचले जैसे श्रीरघुनाथजीने परशुराम पर अपनी शक्ति फैलायदीनी फिर खींचलीनी जिस के ज्ञान बल ऐश्वर्य वीर्य तेज शक्ति स्वाभाविक हैं उस को ब्रह्मकहते हैं ॥ १८४ ॥

और वेदांतों का तात्पर्य जानने वाले परमेश्वर को पहँचानने वाले भूत भविष्य वर्तमान कालों को सदा देखनेवाले सर्वज्ञ सर्वेश्वर के प्यारे परमेश्वर की वाणी उन की वाणी एकमिलती है ऐसे जो महात्मा हैं उन के कहने से श्रीरामचंद्र, श्रीकृष्ण चंद्र साक्षात् ब्रह्म है ॥ १८५ ॥

वेदमें कहा है जो वेद को नहीं जानता है सो ब्रह्म को नहींमानता है जो ब्रह्म को नहींमानता है सो अवतारों को नहींजानता है ॥ १८६ ॥

और कठवल्ली उपनिषद्में कहाहै किकोई वचन कर के बुद्धिकर के श्रवण कर के परमेश्वर नहीं

लभ्यहोता है जिसपर उस की कृपा होतीहै उसको अपना रूप दिखाता है ॥ १८७ ॥

और पुरुषसूक्त में भी कहा है परमेश्वर अजायमान है अर्थात् कर्मों के भोग के लिये जन्म लेने वाला नहीं है अनेक अवतार धारण कर्ता है उस के रूप को ज्ञानी जन जानते हैं ॥ १८८ ॥

और तलवकार उपनिषद् में कहा है अग्नि को वायु को इंद्र को अपना परम पूज्य विग्रह दिखाया ब्रह्म के साकार होने में हजारों प्रमाण हैं ॥१८९॥

वरदराजस्तव में कहा है कि आप तो सच्चिदानंदस्वरूप हो आश्रितों के कारण अनंत गरुड विष्वक्सेनादि परिजनों का छत्र चामरादि परिच्छदोंका किरीट कुंडलादि भूषणों का सुदर्शन पांचजन्यादि आयुधोंका ज्ञान शक्त्यादि गुणों का और अनितर साधारण दिव्यमंगलविग्रह का परिग्रह करतेहो और श्रीनृसिंहतापनी श्रीराम तापनी, श्रीगोपालतापनी उपनिषदोंमें भलीभाँति परमेश्वर के आकार और अवतार का वर्णन है ॥ १९० ॥

अब तात्पर्य यह है कि देवताओं की उपासना और रक्षा के निमित्त विष्णुरूप धारण किया. मनुष्योंको तो उपास्य श्रीरामचंद्र श्रीकृष्णचंद्र ही

हैं क्योंकि सजातीय का आराधन ठीक होसकताहै सजातीय में प्रीति अधिक होती है शीलस्वभावभी मिलते हैं सो परमात्मा ने कृपाकर के अपने आश्रितों के लिये सजातीयावतार धारण कियाहै१९१

गीतामें कहा है साधुओं के परित्राण; दुष्टों के नाश और धर्म की स्थापना के अर्थ मैं समय समयपर अवतार लेताहूं सो साधु कौन हैं जिस का कोई शत्रुनहीं उस की रक्षा क्या अपना दर्शनदेना, सो अब वादीसे कहते हैं कि परमात्मा 'अवतार' को नहीं धारण करसकते हैं सो तो कह नहीं सकते हो बरन् कहसकते हो धारण कर सकते हैं तो आश्रितों के लिये विग्रह धारण किया तो दूषण क्या है ॥ १९२ ॥

और भी कहते हैं सुनो परमात्माने श्रीकृष्ण चन्द्रमहाराज का अवतार धारण करके वात्सल्य गुण प्रकट किया 'कैसा' गोप गोपियों के दोषों को न देखा. सब दोषों को भोग्यमाना. इस से सौशील्यगुण प्रगट किया, सब से निष्कपट होके मिले इस से सौलभ्यगुण प्रगट किया, उन के घरोंमें आप डोलते रहे इस से स्वामित्वगुण प्रगट किया, वत्सहरण के समय सम्पूर्ण बच्छे और ...

आप होके सर्वस्वरूपता प्रगट करी, प्रथम ब्रह्मा-जीको लज्जित किया, पश्चात् आप एकरूप होके ब्रह्माजी को दर्शन देकर कृतार्थ किया, श्रीवृंदाव-नमें और भी बहुत से गुण संबंधरूप लीला प्रगट कीं, किसी के पुत्र, किसी के मित्र, किसी के भ्राता, किसी के भर्त्ता होके भक्ति मार्ग पुष्ट किया ॥ १९३ ॥

जो श्रीकृष्णचंद्र महाराज का अवतार इस भू-मंडलमें नहीं होता तो परमेश्वरका भक्तिमार्ग छिपा रहता, प्रेमियों का मनोरथ पूर्ण न होता, वेद शास्त्रों में लिखे हुए पर भक्ति, परिज्ञान परमभक्ति इन का अवलंब न जाना जाता देखो अबतक महामूर्ख ग्रामीण अर्थात् गँवार सो भी श्रीकृष्णचंद्र के पवित्र लीलामय चरित्रों के यश को गाय गाय देहात्माओं को पवित्र कर्त्ते हैं ॥ १९४ ॥

श्रीमद्भागवत में जो रासपंचाध्यायी कथा है उस को सुनकर कितने ही अनभिज्ञ पुरुष कहते हैं कि श्रीकृष्ण महाराजने परदार गमन किया और इस बात को गुप्त भी नहीं रक्खा गो-पीनाथ कहलाये, गोपियों के वशीभूत रहे, इस का उत्तर अब देते हैं सो सुनो श्रीमद्भागवत वेदांतों

का सार है उसमें रासपंचाध्यायी की कथा तो सर्वसार है इस तत्व को सात्विक जन जानते हैं गोपियों की उसमें शरणगति है और वेदांत का तात्पर्य उसमें दिखाया है ॥ १९८ ॥

स्वदार परदार भाव और गमन करना ये बातें प्राकृत जनों के बीचमें विचारने की हैं सर्वांतरात्मा सर्वसम सर्वस्वामी परमेश्वरमें ऐसी बातों का विचार नहीं हो सक्ता है क्योंकि जितना संसारमें पति पुत्रादि भाव गमनागमनादि व्यापार है कुछभी उस परमेश्वर से भिन्न नहीं संसारी कितने ही जन परमेश्वर को पति मानते हैं कितने ही पुत्र मानते हैं कितने ही पिता मानते हैं कितने ही सखा, तो भावना के बलसे उन उनकी इच्छा पूर्ण हो जाती हैं सो श्रीकृष्णचंद्र महाराजने अपने सत्य संकल्पसे गोपियोंकी वासना पूर्ण करी आपने तो कोई इच्छा नहीं करी उन का स्त्रीत्व का जो अभिमान था सो दूर किया क्योंकि पूर्व जन्म में वे देव ऋषि गंधर्वादिक थे भक्ति की पराकाष्टा पर पहुँचने के लिये स्त्रियों का रूप धारण किया था इस लिये कि जबतक अभिमान बनारहेगा तबतक

मुक्तिमार्ग दूर रहेगा वेदांत मतसे महाराजने गोपियोंके अभिमान को त्याग कराया ॥ १९६ ॥

जो भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र कामकेवश होते तो गोपियों में थोड़ा अभिमान होते ही अंतर्द्धान क्यों होजाते इस में यह दिखाया कि मैं अभिमानियों से दूर हूं गोपस्त्रियों ने परमेश्वर के ढूंढने का बहुत यत्न किया परंतु ईश्वर की प्राप्ति नहीं हुई पश्चात् अपने यत्न से गोपियें रहित हुईं तो वहीं आय के दीन होके रोईं जहां श्रीकृष्ण अंतर्द्धान हुये थे तब परमात्मा श्रीकृष्ण प्रगट हुए, सो इस से यह भाव दिखाया कि परमेश्वर के मिलने में कोई उपाय नहीं जब सब उपाय कर के थक जाय अत्यन्त आर्त्त होजाय तब भगवान् उस पर कृपा कर के प्रगट होते हैं उपाय जितने हैं वे सब थकने के लिये हैं परमेश्वर तो अपने मिलने में आपही उपाय है परमेश्वर के अवतार चरित्रों का स्वारस्य बहुत है एक मुख से क्या कहे जायँगे हजार मुखोंसे तो शेषजीभी कहते हार गयेहैं १९७

पुत्रउवाच–महाराज जिस समय में श्रीकृष्णचन्द्र महाराज का अवतार हुआ था उस समयमें तो भक्तों को आनंद हुआ जैसे जिस समय वर्षा

होती है उस समय मात्र सब को आनंद होता है पीछे तो नहीं होता ॥ १९८ ॥

पितोवाच-वर्षा वर्षती है तब नदी तालाब और गर्त्तों में जल रहजाता है पीछे उस जल से सब लोग अपना २ काम करते हैं ऐसेही अर्चा विग्रह में उस परमेश्वर का अनुसंधान करना चाहिये परमात्मा का अर्चाऽवतार होना इसी हेतु से है परस्वरूपका अनुभव क्षीरसागरके जलके तुल्य है यूव्हावतारका अनुभव मेघोदक जैसा है विभवावतारों का अनुभव नदी जल की नाई है अंतर्यामीस्वरूप का अनुभव कूपोदक के समान है अर्चा विग्रह का अनुभव हस्तोदक सरीसा है ॥ १९९ ॥

पुत्रउवाच-महाराज विश्वरूप जो सर्व व्यापी सर्व में रहने वाला परमेश्वर है उस के अनुभव से अधिक अर्चाविग्रह के अनुभव में क्या विशेष है और क्या प्रयोजन है ॥ २०० ॥

पितोवाच-सर्व में रहने वाला जो विश्वरूप परमेश्वर है उस का अनुभव करना आराधन करना कठिन है क्योंकि सब जगह जडचेतन दोनों हैं उन सबोंमें भावना विना करे विश्वरूप सिद्ध नहीं होता है जो सब में भावना करोगे तो उपा-

सना बिगड जायगी काहेसे कि जो संसारी हैं संसार में रहते हैं प्रकृति के बंधन में बंधे पडे हैं देखते देखतेही ठोकरखाने वाले हैं जिन बातों से बचना चाहते हैं उन्हीं बातों में फँसजाते हैं परंतु अपने कल्याण की चाहना करते हैं, तो सब से सच्चाबोलना इंद्रियों को सब जगहसे रोकना ब्रह्म-को सब में देखना कठिन है. इस कारण से एक स्थानपै परमात्मा का स्मरण करना युक्त है २०१

और कहते हैं परमेश्वर के रूप को पहिचाने विना भावना वा आराधना करनाअसंभव है परमेश्वर और विश्व का रूप शास्त्रों में अलग २ वर्णन किया है सो उस रूप को जहां देखे वहां भावना करै और आराधना करैं ॥ २०२ ॥

और देखो यवनोंने तो मसजिद बना रक्खी है अंगरेजों ने गिरजा घर बना रक्खा है इसी तरह अर्चाविग्रह परमेश्वर की भावना करने का स्थान है जिस मकानमें अर्चा है वहां नियम से पूजा बन सक्ती है इस लिये परमात्मा और महात्माओं ने तीर्थ क्षेत्र मंदिर मूर्त्तियों को श्रेष्ठ रक्खाहै॥२०३॥

पूर्व काल में परमात्मा को सर्वात्मा जानने वाले अनन्यभक्त महात्मा लोग परमेश्वर के स्वरूप

रूप गुणविभूति लीला उपकरण संबंध|इन सब बातों को जानकर अर्चाविग्रह में श्रीनृसिंह श्रीरामचन्द्र श्रीकृष्णचन्द्र इत्यादि अवतारों की भावना करके परमात्मा को प्रगट कर लेते थे, अर्चामूर्तिसे वार्त्ता करते थे अर्चामूर्त्ति बोलती थी और पूजा के अपचार का फल मालूम होताथा अब भावना नहीं करते हैं इस लिये पूजा का वा अपचार का फल नहीं मालूम होता है भावना मुख्य है और कीर्तन आदिले के सब वार्त्ता गौण है ॥ २०४ ॥

अब एक उपाय मोक्ष मिलने का कहते हैं गुरुशरीरी परमात्मा की सेवा सदा सर्वदा करें जो जो गुरु आज्ञा देवे सो सो करै गुरु भक्ति कर्म ज्ञान भक्ति योगों से परे पांचवा उपाय है जो गुरु में निष्ठा करताहै उस का मोक्ष गुरु के संग में होता है जैसे सोनेकी सांकल में लोहेकी सांकल खींची चली जाय अगर टूटे नहीं तो, ऐसे ही चेला गुरु से विमुख न होगा तो मुक्त हो जायगा अथवा गुरुमें चेला दृढ निष्ठा रखता हो गुरु शरीर में ब्रह्म भावना कर्त्ता होय गुरु ब्रह्म निष्ठ न होय तो उस चेला के संबंध करके गुरुकी मुक्ति हो जायगी क्योंकि परमात्मासे इस आत्माका

दोतरफा संबंध है एक शिखा की तर्फ से संबंध है दूसरा चरणौ की तरफसे, दोनों में एक कीभी निष्ठा पक्की होयतो दोनोंको परमपद प्राप्त होगा दोनों को होयतो फिर कहना ही क्याहै॥ २०५ ॥

और परमेश्वर की प्रसन्न ता का एक उपाय और कहते हैं जो परमेश्वर के अनन्य शरणागत सदा भगवानके परम मंगल गुणोंका अनुभव करने वाले श्रीवैष्णवहैं उनकी सेवा सब काल करनी चाहिये वे तो परमेश्वर के अत्यंत प्यारे हैं उन के अपराधों को परमेश्वर भोग्यमान करके सहि लेते हैं उनको भोजन पान वस्त्र धन देने से परमेश्वर प्रसन्न होते हैं और अभ्यागत भगवद्भक्त मात्र की सेवा करे, अनाथ वृद्ध दीन रोगी इनको अन्न वस्त्र देके पालन करे, क्यों कि इनके हृदयमें परमेश्वर आ जाया कर्ते हैं, धन जो है लक्ष्मीजीका रूप है लक्ष्मीजी परमेश्वरकी परम प्यारी पटरानी हैं सब काल परमेश्वर से मिला चाहती हैं सोई हमारी माता हैं इससे हम को चाहिये परमेश्वरसे मिलाप कराय देना ॥ २०६ ॥

और अपनी उत्पन्नकरी हुई जो लक्ष्मीहै सो पुत्री है उसको हरिदासों को अर्पण करनेसे हरि प्रसन्न

होजातेहैं वह लक्ष्मीभक्तहृदयविहारी हरिके अर्पण हो जाती है अपने भोग्य माननेसे उसकी हानि हो जाती है जिसकी उत्पन्न करी हुई लक्ष्मी हरिमें समर्पण हो गईहै सोई राजा जनकहै जो अपने अर्थ भोग लगाया चाहता है सोई रावण है ॥ २०७ ॥

अब और एक परमात्माके प्रसन्न होने का उपाय सुनाते हैं सर्व काल नामकीर्तन करै नारायण वासुदेव, विष्णु नृसिंह राम कृष्ण इत्यादि जो अनंत परमात्माके असाधारण नाम हैं उन में जो नाम अपने को प्यारा लगै उसनाम को सब काल नमन के साथ उच्चारण करे चलते फिरते बैठते उठते सोते समय दोचार वार तो अवश्यही उच्चारण करै नामसंकीर्तनसे परमात्मा प्रसन्न होजायँगे तो अखंड सुखकी प्राप्ति होजायगी नाम स्मरणसे असंख्य पापी अपापी हुए और मुक्त हो गये हैं प्रसिद्ध दृष्टांत अजामिलका है ॥ २०८ ॥

अब और एक उपायकहते हैं सुनो जितने प्रकारके भक्त वैष्णव हैं वे सदा विष्णुभगवानमें अपने सब संबंधों को अनुसंधान करैं लोकमें जिस का जो सम्बन्धी होता है वह उस के कार्य को अपनी शक्ति के अनुसार अवश्यमेव कर्त्ता है

लोकमें एक एकसे एक एक का संबन्ध होता है ऐसेही परमात्मा में हमारे अनेक संबन्ध हैं ॥२०९॥

जिस समय अपने में अविद्या जानें उस समय परमेश्वर का और अपना गुरु शिष्य संबन्ध स्मणर करे जैसे अर्जुन के अज्ञानको दूर कर ज्ञान का प्रकाश कर दिया ऐसेही हमारे अज्ञान को भी वेही दूर करैंगे ॥ २१० ॥

जिस समय अपने में अहंकार ममकार का प्रचार जानें उस समय अपना और परमेश्वर का अंशांशिभाव संबन्ध याद करे अंश क्या परमेश्वर का भाग अर्थात् हिस्सा। लोकभी कहते हैं कि जिसका भाग उस को पहुँचे सो अपने को परमेश्वर का पदार्थ जान के ऐसे प्रार्थना करै कि हे नारायण मैं आप की वस्तु हूं मेरे को अंगीकार करो ॥ २११ ॥

जिस समय अपने को अपराधी जाने उस समय परमेश्वर का और अपना पिता पुत्र संबन्ध याद करैं जैसे लौकिक पिता जो है सब प्रकार से पुत्र की बढ़वार चाहता है उस के दोषों की तरफ नहीं देखता है और अपने से भी अधिक उसकी उन्नति चाहता है परंतु कर नहीं सक्ता है क्योंकि

असमर्थ है अनित्यहै उस का टूट संबन्ध है वह तो देह का पिता है परंतु परमेश्वर हमारा नित्य पित निरुपाधिक पिता, अव्यय पिता, और आत्माका पिता है इस तत्त्व को जानकर के ऐसी प्रार्थना करै कि हे गोविन्द आप तो हमारे समर्थ पिता हो हम को पुत्र मानकर अंगीकार करो हमारे दोषों को मत देखो हमारा हित चाहते हो तो हमारा पदार्थ हमें दो ॥ २१२ ॥

अनादि कालसे मैं कृतघ्न और दुराभिमानी होरहा हूं आप की सेवासे च्युत होरहा हूं हे पतितपावन लक्ष्मीकांत हमें अपना दास बनालो अपनी सेवा हमें दो आपही हमारे माता पिता हो 'माता कैसे' उत्पन्न करने वाले पोषण करने वाले और प्यार करने वाले हो जैसे माता सब तरह प्रिय करती है हे स्वामिन् संसार जाल से हमें छुटाओ अपना नित्य कैंकर्य हमें प्राप्त कर दो ॥ २१३ ॥

जिस समय अपने को अनाथ जाने उस समय परमात्मा का और अपना भर्तृ भार्या संबन्ध अनुसन्धान करैं जैसे लौकिक भर्त्ता भार्या के अपराध को सहता है भरण पोषण कर के प्रसन्न कर्त्ता है ऐसे परमेश्वर भी करेंगे ऐसे जाने तब यों प्रार्थना

करे कि हे दीनानाथ आप हमारे भर्त्ता हो, भोक्ता हो, सुहृद हो, शेषी हो हमारे दोषों को सह लो हमें अपनी सेवा दो ॥ २१४ ॥

जैसे कंगाल की कन्या राजा को व्याही गई होय तो भर्त्ता की भाग्य से आप भी सुख भोग करती है उस का भाग्य अलग नहीं है ऐसे ही परमेश्वर हमारा भर्ता है उन के भाग्यमें हमारा भाग्य है परमेश्वरके सबही पदार्थ हमारे हैं हम परमेश्वरकी वस्तु हैं अनन्य भोग्य हैं अनन्य शरण हैं अनन्य शेष हैं ऐसे अनु संधान करना चाहिये ॥ २१५ ॥

पुत्र उवाच—महाराज आप कहते हैं कि परमेश्वर में भर्तृ भार्या का संबंध अनुसंधान करें, तो स्त्रियां तो परमेश्वर को भर्ता मानके अनुसंधान कर सकती हैं परंतु जो पुरुष हैं वे कैसे अपना भर्तामान अनुसंधान करसक्ते हैं कहिये॥२१६॥

पितोवाच—संसार में जितनी वस्तु दिखाई देतीहै वेसब प्रकृति हैं और स्त्रीपुरुष प्रकृतिके वशीभूतहैं सब स्त्रीतुल्य हैं जो प्रकृति के वशीभूत नहीं है सो एक परमेश्वर पुरुष है इससे भर्तामान

अनुसंधान करनेमें कोई दोष नहीं सब संबंधोंमें यह प्रबल संबंध है ॥ २१७॥

और कहते हैं सुनो सर्व भूतों के हृदय में स्थित होके सब का भरण पोषण करनेवाला एक परमेश्वर के शिवाय और दूसरा कौन पति होसकता है श्रीगीताशास्त्र में कहा है उत्तम पुरुष प्रकृति पुरुष से अन्य है परमात्मा है तीनों लोक में स्थित होके सब का भरण करता है इस से वह नित्य भर्ता है ॥ २१८ ॥

जिस समय अपने में स्वतंत्रता जाने तब परमात्मा का अपना आधाराधेय संबंध याद करे आधाराधेय संबंध यह है कि परमेश्वर के आधार विना हम अलग नहीं रहसक्ते हैं परमेश्वर में रह सकते हैं जो जहां रहता है वह उस का आधार कहलाता है ॥ २१९ ॥

यह सब परमेश्वर की प्रसन्नता के उपाय हैं अपने सामर्थ्य के अनुसार किसी एक उपाय में निष्ठा रखकर जिस उपाय में आरूढ होगा उसी उपाय से सब सुख मिलेंगे ॥ २२० ॥

जो तुम सुख की चाहना करो तो सो तो सुनो ब्रह्मांडमें जितने सुखहैं सब लौकिक हैं अर्थात् इसी

लोक में अल्प काल मे होनेवाले हैं जो पारलौकिक सुख है सो मोक्ष है कोई सुख साक्षात् मिलता है कोई सुख परंपरासे, सब सुखों के देनेवाले परमेश्वर हैं मोक्ष सुख के सामने प्रापंचिक सुख सब तुच्छ हैं नाशवान् हैं इस बात को जानकर प्रपन्न जन नित्य सुख की चाहना करते हैं नित्यसुख परम पद में है जो प्राणी परमेश्वर से मिलते हैं वे उस सुख को जानते हैं ॥ २२१ ॥

वह कैसा सुख है मुक्त भोग्य है मुक्त वह है जो संसार वासना से छूटकर परमपद में जाय सत्य काम सत्य संकल्प होजाते हैं पुण्य पाप करके रहित क्षुधा पिपासा करके रहित शोक मोह करके रहित होजाते हैं और जन्म मृत्यु जरा व्याधियों से रहित होजाते हैं परमेश्वर के साथ अखंड सुख का अनुभव करते हैं इच्छानुसार जैसा चाहें वैसे रूप को धारण करसकते हैं इच्छित शरीर करके परमेश्वर की सेवकाई करते हैं मुक्तात्माओं का सामर्थ्य अपार है यदि वे चाहें तो उन को सब ब्रह्मांडों के सुख अनुभव होजाते हैं और चाहें तो यहां रहकर श्रीवैकुंठ के सब सुखों को अनुभव कर सक्ते हैं मुक्तैश्वर्य की प्रशंसा

कहांतक वर्णन करैं इस थोडे में समझलो॥२२२॥

पुत्र उवाच—महाराज मेरे ऊपर परम कृपाकर बड़े संदेह को निवारण किया अब यह भी कहिये कि परम पद क्याहै प्रपन्न किस को कहते हैं विरोधी किस का नाम है जो अपनी आत्मा को इस शरीरसे भिन्न नहीं जानने देता है, व परमेश्वर को नहीं जानने देता जो परमात्मा के प्रसन्न होने का उपाय है उस को नहीं करने देता है जो मोक्ष सुखसे भी हटाय दिया है सो कौन है कृपाकर कहिये ॥ २२३ ॥

पितोवाच—जहां परस्वरूप पर वासुदेव नित्य मुक्तों को नित्य दर्शन देते हैं सो परम पद है परम पद के चार भेद हैं आमोद १ प्रमोद २ संमोद ३ वैकुंठ ४ और त्रिपाद्विभूति परम व्योम अप्राकृत लोक आनंद लोक अयोध्या ऐसे असंख्य नाम हैं वहां बारा आवरण वाला अनेक गोपुर कर के सुशोभित एक नगर है जिस का नाम श्री वैकुंठ कहते हैं वहां आनंद नामक दिव्य भवन है जिसमें जीव रत्नों करके जडे हुए हजार स्तंभोंके मणिमंडप नामकी सभा है जिसमें सहस्र शिर वाला शेषजी सिंहासन बनके ऊपर छत्रकीनाईं

छाया करता है उसपर धर्मादियोंकरके युक्त पीठ उस के ऊपर अष्टदल पद्म उसके ऊपर मनो वाणियों के अगोचर परवस्तु है परम पद नित्य है जिस का किसी काल में नाश नहीं ब्रह्मादियों के सृष्टि से बाहर हैं जहां सूर्य चंद्र और नक्षत्रोंका प्रकाश नहीं पड सक्ता है वहां स्वयंप्रकाश हैं परम पद के ऊपरकी तरफ सीमा नहीं है नीचेकी तरफ प्रकृति मंडल की सीमा है वहां जानेसे ब्रह्मानंद प्राप्त होता है इससे यह आनंदलोक कहलाता है वहां पंचोपनिषदों के मंत्रोंकी शक्ति कर के पदार्थ बनते हैं उपनिषदोंमें परम पदका वर्णन विस्तार पूर्वक है ॥ २२४ ॥

प्रपन्न क्या है जो सब प्रकारसे असमर्थ दूसरी गति करके रहित होकर जो वेद वेदांतोंके तात्पर्य को जाने हुए महात्मा ओंके अवलंबसे लक्ष्मीपति के चरणारविंदमे शरणागति करे हैं सो प्रपन्न कह- लाताहै प्रपन्न दोतरहका है एक आर्त प्रपन्न दूसरा दृप्त प्रपन्न संसारमें रहना अति दुःख मानकर शरणा गति परमेश्वरकी करनेके साथही जो मोक्षको जाना चाहे हैं सो आर्त प्रपन्न है सुख दुःखों को सहन करके शरीर है जब तक रह के परमेश्वरकी

मरजीसे मोक्ष को जाना चाहे सो दृप्त प्रपन्न है ये दोनोंही अन्य देवताओंकी शरण नहीं जाते अपने को अन्योंका शरणागत नहीं समझते हैं ॥ २२५॥

अब विरोधीका वर्णन करते हैं अज्ञान, अन्यथा ज्ञान, विपरीतज्ञान, दुष्कर्म, दुर्वासना दुष्टरुचि ये विरोधी हैं प्रकृतिके विषयोंमें चित्त लगा रहताहै तो इस से जन्ममरण होते हैं संसाररूपी एक नदी है, वह दो तरफ को बहती है एक तर्फ दुःख है और दूसरे तर्फ सुख है जो दुष्ट संग, विस्मरण, विषयासक्ति रूपी प्रवाहमें पड़ गया तो वह लक्ष चौरासी गर्त्तों में डूबता तैरता अनंत दुःख पावेगा और सत्संग, सुस्मृति, भक्तिप्रवाहमें पड़ गया तो ब्रह्मासन राजासन आदि टीलाओं पर चढ़ते फिरते अखंड सुख पावेगा ॥ २२६ ॥

जिस समयमें प्राणी इंद्रियोंके विषयोंको अनुभव कर्त्ता है उस समयमें इंद्रियोंके देवता उसको धिक्कार करते हैं और उन्हीं इंद्रियोंसे जिस समय परमेश्वरकी सेवा कर्त्ता है उस समय इंद्रियों के देवता उस का सत्कार कर्त्ते हैं अपने को कृतार्थ मानते हैं इससे विषयों के तर्फ लगना प्राणका खोना है अर्थात् आत्माका नाश करनाहै, परमेश्वरकी सेवामें लगना

अपने को जिवावना है जैसे बंदूकमें गोली भरके निशान के सामने करके चलाये गा तो गोली निशानमें लग के जीतहोय है यदि बंदूक का मुख फेरके अपने सामने करके अपने ऊपर चलायेगा तो अपनेको लगके आप मारा जायगा॥ २२७॥

सबको प्यारा आत्मा है शरीर तो आत्माके संबंध से प्याराहै जिस समय शरीर को आत्मा छोडता है उससमय उस शरीरसे स्त्री भी डरती है जो एकांतमें जिसको अपना रमण समझतीहै सोई एकांतमें डरती है एकली पास बैठ नहीं सक्ती है आत्मा के विना शरीर मुर्दा कहलाता है सो इस शरीरको परमेश्वर की सेवामें अर्पण करेगा तो दिव्य शरीर पावेगा॥ २२८॥

पुत्र उवाच–महाराज संसाररूपी बंधन है इससे मुक्त होने का एक उपाय और कहो जो सुलभ होवे॥ २२९॥

पितोवाच–कंसने उग्रसेन को कैदमें रक्खा तो श्रीकृष्णचंद्र बलराम सहित आयके कैदसे मुक्त ऐसेही मोहरूपी कंसने इस जीवात्मारूपी उग्रसेन को संसार रूपी कैदमें बंद कर रक्खा है जब विवेकरूपी श्रीकृष्णचंद्र विचार बलसहित आय

कर संसारसे छुडावेंगे तब मुक्त होगा "कब होगा" अनादि कालसे जीव को अज्ञान रूपी निद्रा ग्रस रही है जब परमेश्वर संकलपरूपी सूर्य उदय होगा तब दूर होगी मुक्त हो जायगा मुक्त होनेमें और कोई भी उपाय नहीं है केवल परमेश्वर की नित्य सेवाकरै स्वरूप रूप गुण वैभवों को अनुभव करैं ॥ २३० ॥

पुत्र उवाच—महाराज! ये जो इंद्रियें हैं सो महा चंचल हैं इनको किस प्रकार जीतें मन तो अतिही चंचल है पवन को भी रोकना सहज है परंतु उस को रोकना दुष्कर है ॥ २३१ ॥

पितोवाच—अभ्यास करके योग का संपादन करो धैर्य करके शिश्न को जीतो, उदर को जीतो निस्पृह हो करके हाथ पांव को जीतो, ज्ञानसे आंख कानों को जीतो, सत्यकरके वाणी को जीतो, वैराग्य करके मन को जीतो, अथवा दृष्टि कर के हाथ पांवोंको जीतो, मन करके आंखो कानोंको जीतो, बुद्धिकरके मनको जीतो, सत्संग करके बुद्धि को निर्मल करो ॥ २३२ ॥

जो कुछ भोग करो वह विचारके करो, जो कुछ कार्य करो देखके करो, जो कुछ देखोगे

सो समझ के देखो, समझ के सुनो, जानकर संदेह दूर करो, ठीक बोलो, शरीर से आत्मा का विचार करो, शरीरके अंतर्यामी आत्मा है, आत्माका अंतर्यामी परमात्मा हैं; सो विष्णु भगवान है संसारको जीतनाचाहो तो उस विष्णुभगवान से प्रार्थना करोकि हेस्वामिन् ! हमको इस बंधन से छुटाओ, आपने गजेंद्र को ग्राहकेफंदे से छुटायाहै तो मेरे कोभी इस फदेसे छुटाओ मैंतो संसाररूपी अथाहसरोवरमें अनादि काल से गिरा हूं पंचेंद्रियरूपी पंच ग्रहोंकरके खींचा जारहाहूं इनको जीतनेकी मुझमें बल बुद्धि नहीं है इससे आपकी शरण में आया हूं डूबनेकी वेला है अब उपेक्षा करोमत, रक्षा करनेका यही समय है पतितका उद्धार करनेवाले इस संसारमें आप विना और कोई हम को नहीं मिला है, तो हमसे रक्षा के पात्र दया के पात्र आपको और कौन मिलैगा अब कब रक्षा करोगे हे भक्त वत्सल अपनी दया हमारेमें प्रकाशित करो, आपके सुदर्शन चक्र का प्रकाश हमारी दृष्टिके सामने करदो हमारे मन को विषयोंसे हटाओ हमारे हृदय की कठोरताको मिटाओ अपने चरणारविंदमें लगाओ हमको

अज्ञान निद्रासे जगाओ तृष्णाको दूर करो संसारसे उद्धार करो हम आपके शरणागत हैं आप हमारे रक्षक हो आपके हम रक्ष्य हैं "रक्षक कौन है जो अनिष्ट को दूर करके इष्टको देवे" हमारे इष्ट और अनिष्टको आपही जानतेहो. हे दामोदर! अनिष्टको दूर करनेवाले इष्टको देनेवाले आपहीहो इस प्रकार प्रार्थना करनेसे राजी होंगे तो संसारसे छुटाकर अपनी तर्फ लगाकर सेवा अंगीकार करेंगे समर्थके पल्ले पडेकी लाजसमर्थको होती है ॥ २३३ ॥

पुत्रउवाच–महाराजमुमुक्षु जन संसारमें किस प्रकार रहै सो आज्ञा करो ॥ २३४ ॥

पितोवाच–जैसे जानकी लंकामें रही ऐसे मुमुक्षु जन संसारमें रहैं ॥ २३५ ॥

और कहते हैं सुनो, जानकीजीने सुवर्णके मृगकी चाहना करी इससे रघुनाथजी दूर होगये ऐसेही यहजीवसंसारके विषयोंकी चाहना करैगा तो परमेश्वर छोडके दूर होजायंगे जानकीजीने लक्ष्मणजीका तिरस्कार किया इससे रावणके वश होगई ऐसेही यह जीव परम भागवत वैष्णवोंका तिरस्कार करैगा तो अहंकार रूपी रावणके वश होजायगा जानकीजीने लंका के

पदार्थोंको विषकेतुल्य समझा ऐसेही मुमुक्षु जीव प्रपंचके पदार्थोंको विषकेतुल्य समझे आसक्त नरहें जानकीजी रघुनाथजीके अमृततुल्य रामनाम रसायनको पानकर्तीरही इससे शरीरको धारण कर्ती रही और इंद्रआयके अमृतका पान करायगयाथा उससे क्षुधाशांति करी ऐसे मुमुक्षु जीव भी न्यायपूर्वक द्रव्यका उपार्जनकर परमेश्वर को समर्पणकर उसको प्रसादके भावसे ग्रहण कर शरीरका निर्वाह करैं जानकीजी राक्षसियोंके दिये हुए कष्टोंको सहतीरहीं ऐसे इंद्रिय वर्ग दुःख देते हैं तो मुमुक्षजीव उनको सहिलेवें जानकीजी त्रिजटा सरमा इनके प्रियवचनोंसे कालको व्यतीत कर्ती रही ऐसेही मुमुक्षु जीवभी भागवत वैष्णवजनोंके सत्संग संलापोंकरके दिनको व्यतीत करैं ॥ २३६ ॥

और कहते हैं सुनो रघुनाथजीने जानकीजी की खबरलानेकेलिये हनुमानजी को भेजा, तो हनुमान जीने जानकीको रघुनाथजीकी खबर सुनाई और रावण राक्षसियोंका तिरस्कारकिया लंकाको जलाया फिर रघुनाथजीको जानकीजीकी खबरसुनाई ऐसे परमेश्वर देहरूपी लंकामें दशें-

द्रिय मुखवाला मनरूपी रावणने लेजाने रक्खा हुआ जीवरूपी जानकीजीकी खबर लानेके लिये आचार्य रूपी हनुमानजीको भेजते हैं तो आचार्य इसजीवको भगवानका प्रभाव सुनाते हैं और अहंकार ममकाररूपी राक्षसराक्षसियोंका तिरस्कार कर्तें हैं शरीराभिमानरूपी लंकाको जलातेहैं, फिर परमेश्वरको इस चेतनकी प्रार्थना सुनाते हैं ॥ २३७ ॥

और रघुनाथजीने वानरों की सेनाको संग लेके समुद्रका पुलबांधा ऐसेही परमेश्वर श्रीभागवत वैष्णवोंको संगलेकर संसार समुद्रका पुलबांधते हैं भक्ति प्रपत्ति जोहै सोई पुलहै भक्तोंने भगवान की आज्ञासे बांधाहै ॥ २३८ ॥

उस मार्गसे जाके लंकाको तोडके रावण राक्षसों को मारके जानकीजीको अंगीकार किया ऐसेही अहंकार ममकारोंको दूर कर शरीर बंधन को तोडकर इस चेतनका अंगीकार कर्त्तें हैं ॥२३९॥

जानकीजी लंकामें दशमहीने रहीं पीछे प्राप्त हुईं ऐसे मुमुक्षुजीवोंको प्रारब्ध भोगके उपरांत परमेश्वरकी प्राप्ति होतीहै ॥ २४० ॥

श्रीरघुनंदन महाराज पुष्पक विमानमें

जानकीजीको चढायकर मार्गमे जहां जहां जो जो काम किया था उस को दिखाते हुए श्री अयोध्याको पधारे, ऐसे परमात्मा दिव्य विमान में मुमुक्षुजीव को चढाय कर अर्चिरादि मार्गमें लीला विभूतीको दिखाते हुये श्रीवैकुंठ को पधारते हैं ॥ २४१ ॥

और श्रीरघुनंदन महाराज जानकीजीको आपही रावणकी कैदसे छुडायकर अंगीकार किया अपना परिपूर्ण सुख दिया ऐसे मुमुक्षुचेतनको भगवान आपही संसारकी कैदसे छुडायकर स्वीकार कर्त्तै हैं, और अपना सर्वविधकैंकर्यका महासुख देते हैं ॥ २४२ ॥

कितने महात्मा मनको सुदर्शनचक्र करके अनुसंधान कर्त्तै हैं सो चक्र परमेश्वरके श्रीहस्त कमलमें है चाहै जिधरको चलायदे उधरको जाय है जिस कार्यको करावें उस कार्यको करे हैं बुद्धि जो है खड्ग है कुमति सोई म्यान है ये सब परमात्माके हस्तकमलमें हैं पंचमहाभूत और पंचतन्मात्रा परमेश्वरकी वनमाला है जो भगवानके गले मे हैं सात्विकाहंकार तामसाहंकार ये दोनों शंख और शार्ङ्ग हैं, सो भगवानके पास हैं दसजो इंद्रियाँ

हैं सोई बाण हैं वे भगवान के तर्कसमें हैं, जीवात्मा जो है सोई कौस्तुभमणि है सो परमात्माके वक्षःस्थलमें हैं, मूल प्रकृति जो है सोई श्रीवत्सका चिह्न है, महत्तत्व जो है सोई भगवानकी गदा है जो वाम हस्तमें धारण करी है, 'ये सब' परमात्मा प्रपंच सृष्टिकरके लीलादेवीको साथ लेकर चाहै विहार करैं अथवा विभूषणों के समान श्रीअंगमें धारण करें अथवा इनसे विरोधीबंधनोंको तुडावैं अथवा संसाररूपी बंधनोंमें फँसावें, सबतरे इनकी इच्छाके आधीन है ॥ २४३ ॥

और कितनेही महात्मा ऐसे अनुसंधान कर्त्तें हैं कि हे सर्वलोकशरण्य आप तो हमारे अंतर्यामी हो, और स्वामी हो, यह शरीर आपके रहनेका स्थान है, हमारे प्राण आपके अनुचर हैं, हम जो जो कर्म कर्त्तें हैं सोई आपकी पूजा है, हमारे इंद्रियोंसे जो भोग होते हैं, सोई आपका भोग राग है हम सोते हैं सोई समाधी है, हमारा जो चलना फिरना है, सो आपकी प्रदक्षिणा है, हम अपनी वाणीसे जो वार्त्ता कर्त्तें हैं, सो आपकी स्तुति है, हमारा जो कुछ व्यापारहै हेपुरुषोत्तम आपकाही व्यवहारहै२४४॥

और कितने महानुभावोंका ऐसा अनुसंधान है

कि हे जगन्नाथ! आप सर्वस्वामी हो सर्व आपका सर्वस्व है आप सबको प्रेरणा करनेवाले हो हमारे चित्तको प्रेरणा करो अपने श्रीपाद कमलोंका आसरा लिवाओ कृपा करो अब मैं थकाहूं आपका शरणागतहूं आप शरणागत वत्सलहो मैं असंख्यात अपराधोंकी खानहूं आप अपार करुणाके निधान हो संसाररूपी समुद्र जो है, बडा भयानक है मैं उसके बीचमें पडाहूं यहां कोई आश्रयनहीं है आप हमारे अवलंब हो, कृपा करके अपने श्रीपाद पद्मरूपी नावमें हमको बैठायलो ॥ २४५ ॥

अब और एक अनुसंधान कहते हैं, आप चक्रवर्ती राजा हो, आपकी जगन्मोहिनी जो माया है सोई एक महा नटिनी है, हमजीव हैं, नाचने वाले पात्रहैं, सो आपकी नटिनी हमारे चौरासी प्रकारके स्वांग बनाय २ आपको रिझाती है, सो आजतक अगणित हमारे स्वांग बनाय२कर नचाया, अब हम थके हैं कृपा करके अब हम को छुट्टी देउ रीझे होतो हमें इनाममें छुट्टी देउ न रीझे होतो खेलसे दूर करो अब हम वारंवार नमस्कार कर्त्ते हैं २४६

और एक अनुसंधान कहते हैं सुनो यह शरीर है सोई श्रीरंगक्षेत्र है इसके सप्त धातु हैं सोई सप्त

प्राकार हैं इसमें सुषुम्नानाडी है सोई कावरी ह मन जो है सोई श्रीरंगविमान है जीव है सोई श्री गोदा है अंतर्यामी जो है सोई श्रीरंगनाथ है ब्रह्मोत्सव अध्ययनोत्सव पवित्रोत्सव वैकुंठोत्सव इत्यादि सब उत्सव इस शरीर रूपी श्रीरंगक्षेत्र में होयहैं ॥ २४७ ॥

अथवा कितने महात्मा ऐसे अनुसंधान कर्ते हैं कि परमभगवद्भक्तोंका तो देहही श्रीवैकुंठहै अष्टप्रकृति जोहैं सोई विमलाउत्कार्षिणी आदि अष्टावरण शक्ति हैं हृदयही आनंद निलयहै इसमें जो भक्तिका प्रवाह है सोई विरजानदीहै आत्मा जो है श्रीनीलादेवी है अंतरात्मा जो है सोई श्रीपरवासुदेव है नित्यानंद, ब्रह्मानंद, सालोक्यमुक्ति, सारूप्यमुक्ति, सामीप्यमुक्ति, सायुज्य मुक्ति इसीमें प्राप्त होतीं हैं ॥ २४८ ॥

और एक अनुसंधान कहते हैं सुनो शरीर है सोई वृंदावन है अष्टप्रकृति हैं सोई ललिता विशाखा आदि अष्टसखी हैं जीव है सोई श्रीराधा है परमात्मा जो है सोई श्रीकृष्ण है अंतःकरण है सोई निकुंज है इनका विचार है सोई श्रीराधाकृष्ण का विहार है बाल क्रीडा, गो चारण रासक्रीडा

कि हे जगन्नाथ ! आप सर्वस्वामी हो सर्व आपका सर्वस्व है आप सबको प्रेरणा करनेवाले हो हमारे चित्तको प्रेरणा करो अपने श्रीपाद कमलोंका आसरा लिवाओ कृपा करो अब मैं थकाहूं आपका शरणागतहूं आप शरणागत वत्सलहो मैं असंख्यात अपराधोंकी खानहूं आप अपार करुणाके निधान हो संसाररूपी समुद्र जो है, बडा भयानक है मैं उसके बीचमें पडाहूं यहां कोई आश्रयनहीं है आप हमारे अवलंब हो, कृपा करके अपने श्रीपाद पद्मरूपी नावमें हमको बैठायलो ॥ २४८ ॥

अब और एक अनुसंधान कहते हैं, आप चक्रवर्ती राजा हो, आपकी जगन्मोहिनी जो माया है सोई एक महा नटिनी है, हमजीव हैं, नाचने वाले पात्रहैं, सो आपकी नटिनी हमारे चौरासी प्रकारके स्वांग बनाय २ आपको रिझाती है, सो आजतक अगणित हमारे स्वांग बनाय२कर नचाया, अब हम थके हैं कृपा करके अब हम को छुट्टी देउ रीझे होतो हमें इनाममें छुट्टी देउ न रीझे होतो खेलसे दूर करो अब हम वारंवार नमस्कार कर्त्ते हैं २४६

और एक अनुसंधान कहते हैं सुनो यह शरीर है सोई श्रीरंगक्षेत्र है इसके सप्त धातु हैं सोई सप्त

पृ॰	पं॰	अशुद्ध.	शुद्ध.
७०	१५	[illegible]	[illegible]
७४	१२	[illegible]	[illegible]
७५	६	[illegible]	[illegible]
७९	१९	[illegible]	[illegible]
८२	११	[illegible]	[illegible]
८४	८	[illegible]	[illegible]
९०	४	[illegible]	[illegible]
,,	५	[illegible]	[illegible]
९१	२	पित	[illegible]
९३	२०	[illegible]	[illegible]
९४	९	[illegible]	[illegible]
९८	१८	[illegible]	[illegible]
,,	,,	[illegible]	[illegible]
१००	८	[illegible]	[illegible]
,,	१०	[illegible]	[illegible]
१०२	२	[illegible]	[illegible]
१०३	१	[illegible]	[illegible]
,,	१८	[illegible]	[illegible]

पृ०	प०	अशुद्ध.	शुद्ध.
३८	७	तोमुरगे	सोमुरगे
"	९	तोसिंह	सोसिंह
४०	७	धनप्राणके	धनतोप्राणके
४१	१२	लगीआईआहार	लगीआहार
४६	१	मेरको	मेरेको
४७	२	ज्ञानगुणकहे	ज्ञानगुणक है
५०	१	शरीरमों	शरीरमें
"	१७	अशभूत	अंशभूत
५१	१७	रुचियोसे	रुचियोंसे
५३	४	करनी	करने
५३	१२	छुटाई	छोटाई
५४	७	द्रव्य	द्रव्य,
"	२०	महत्तत्वसे	महत्तत्व,महत्तत्वसे
५६	५	तन्मात्राअवस्था	तन्मात्रावस्था
"	७	दही । दुआ	दहीहुआ
"	१९	दश	दस
५७	१५	दशइंद्रियोके	दसइंद्रियोंके
५९	४	पचीकरण	पंचीकरण
६०	१६	अव	अब
६५	१२	जायगे	जायँगे
६६	४	प्राप्तहोती	प्राप्तहोतीं
"	१०	पंचाग्निविद्य	पंचाग्निविद्या
६७	१६	करे	करें
६९	१६	दैत्य की	दैत्य के
७०	१३	महाराजने	महाराजका

पृ०	पं०	अशुद्ध.	शुद्ध.
७०	१५	युद्धकर	युद्धकरे
७४	१२	लंकाके	लंकाको
७५	७	जायगे	जायँगे
७९	१९	उपनिषदूमें	उपनिषद्में
८२	११	पारिज्ञान	परज्ञान
८४	८	हुईतोवहीं	हुईवहीं
९०	४	स्मणर	स्मरण
"	५	करे	करें
९१	२	पित	पिता
९३	२०	करोतोसो	करोसो
९४	९	वहहै	वेहैं
९८	१८	बलरामसहित	बलसहित
"	"	मुक्तऐसेही	मुक्तकियेऐसेही
१००	८	फदेसे	फंदेसे
"	१०	ग्रहों	ग्राहों
१०२	२	समझे	समझें
१०३	१	लेजाने	लेजाके
"	१८	दश	दस

पृ०	प०	अशुद्ध.	शुद्ध.
३८	७	तोमुरगे	सोमुरगे
,,	९	तोसिंह	सोसिंह
४०	७	धनप्राणके	धनतोप्राणके
४१	१२	लगीआईआहार	लगीआहार
४६	१	मेरको	मेरेको
४७	२	ज्ञानगुणकहे	ज्ञानगुणक है
५०	१	शरीरमों	शरीरमें
,,	१७	अशभूत	अंशभूत
५१	१७	रुचियोंसे	रुचियोंसे
५३	४	करनी	करने
५३	१२	छुटाई	छोटाई
५४	७	द्रव्य	द्रव्य,
,,	२०	महत्तत्वसे	महत्तत्व,महत्तत्वसे
५६	५	तन्मात्राअवस्था	तन्मात्रावस्था
,,	७	दही। दुआ	दहीहुआ
,,	१९	दश	दस
५७	१५	दशइंद्रियोंके	दसइंद्रियोंके
५९	४	पचीकरण	पंचीकरण
६०	१६	अव	अब
६५	१२	जायगे	जायँगे
६६	४	प्राप्तहोती	प्राप्तहोतीं
,,	१०	पंचाग्निविद्य	पंचाग्निविद्या
६७	१६	करे	करें
६९	१६	दैत्य की	दैत्य के
७०	१३	महाराजने	महाराजका

पृ०	पं०	अशुद्ध.	शुद्ध.
७०	१५	युद्धकर	युद्धकरे
७४	१२	लंकाके	लंकाको
७५	७	जायगे	जायँगे
७९	१९	उपनिषदूमें	उपनिषद्में
८२	११	पारिज्ञान	परज्ञान
८४	८	हुईतोवहीं	हुईवहीं
९०	४	स्मणर	स्मरण
,,	५	करे	करें
९१	२	पित	पिता
९३	२०	करोतोसो	करोसो
९४	९	वहहै	वेहैं
९८	१८	बलरामसहित	बलसहित
,,	,,	मुक्तऐसेही	मुक्तकियेऐसेही
१००	८	फदेसे	फंदेसे
,,	१०	ग्रहों	ग्राहों
१०२	२	समझे	समझें
१०३	१	लेजाने	लेजाके
,,	१८	दश	दस